पूर्वाञ्चल खेती

वर्ष : 29 अक्टूबर, 2019 अंक : 10

43वां स्थापना दिवस विशेषांक

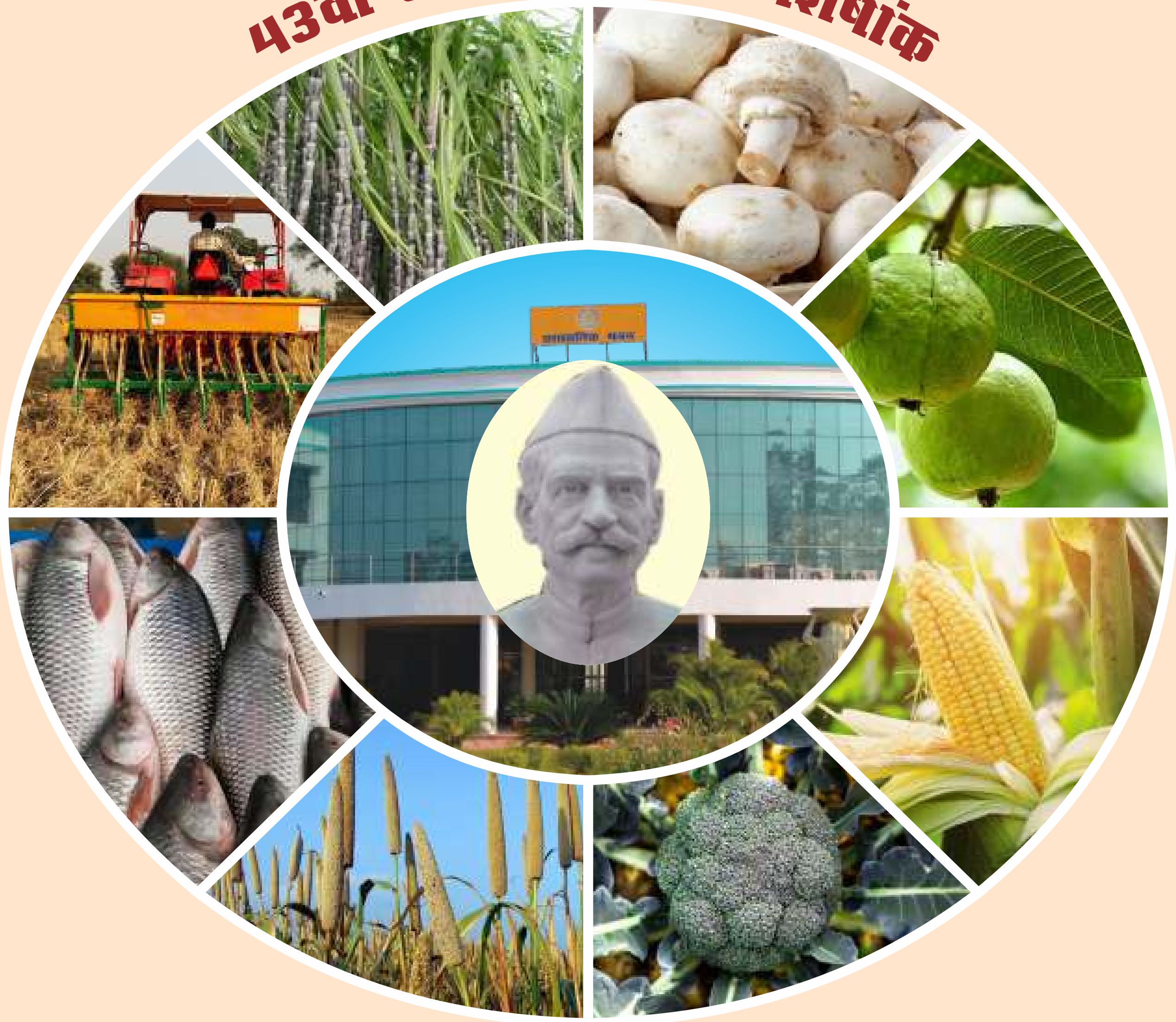

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वाञ्चल खेती

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

43वां स्थापना दिवस विशेषांक

पूर्वाञ्चल खेती

वर्ष 29 | अक्टूबर, 2019 | अंक 10

संरक्षक
डॉ. बिजेन्द्र सिंह
कुलपति

प्रधान सम्पादक
प्रो. ए. पी. राव
निदेशक प्रसार

तकनीकी सम्पादक
डॉ. अनिल कुमार राय
सह प्राध्यापक (पशु विज्ञान)
मो. नं. 9415140493

सम्पादक मण्डल

डॉ. आर. आर. सिंह
प्राध्यापक, मृदा विज्ञान

डॉ. वी. एस. चन्देल
सह प्राध्यापक, उद्यान

डॉ. शैलेश कुमार सिंह
वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष, केवीके बाराबंकी

डॉ. अनिल कुमार
सहायक प्राध्यापक, प्रक्षेत्र प्रबन्ध

डॉ. वी. पी. चौधरी
सहायक प्राध्यापक, पादप रोग

डॉ. पंकज कुमार
सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान

सम्पादक
उमेश पाठक
मोबाइल नं. 9415720306

विषय सूची

- **जौ फसल की प्रगतिशील खेती** 01
  विपुल सिंह, डॉ ए.पी. राव एवं अमरनाथ सिंह
- **रबी मौसम में उगाये जाने वाली विभिन्न प्रकार की सब्जियों के बारे में तकनीकी जानकारी** 04
  डॉ राजकुमार पाठक, डॉ वी.पी. पाण्डेय, नवनीत कुमार, संदीप कुमार दिवाकर
- **मटर की वैज्ञानिक खेती** 06
  मंजीत कुमार, डॉ सी. एन. राम, डॉ जी. सी. यादव, श्रवण कुमार' एंव राजन चौधरी'
- **गन्ने की फसल में खरपतवार प्रबन्धन** 09
  डॉ राम प्रताप सिंह
- **तिलहनी फसलों में गंधक का महत्व एवं प्रयोग विधि** 12
  डॉ अजीत कुमार' डॉ संजय कुमार'' एवं दिनेश कुमार'''
- **फसल अवशेष प्रबन्धन मृदा के लिए वरदान** 14
  रेनू आर्या', सोनम आर्या'', आर.एल. आर्या''' एवं एस.के. वर्मा''''
- **मोटे अनाजों का पौष्टिक महत्व एवं उपयोगिता** 18
  सरिता श्रीवास्तव' एवं संतोश कुमार चतुर्वेदी''
- **श्वेत बटन मशरूम की खेती** 20
  डॉ प्रदीप कुमार' एवं डॉ वी.पी. चौधरी''
- **ब्रोकली की खेतीः अधिक आय का श्रोत** 23
  समीक्षा वर्मा', सुरेंद्र कुमार वर्मा'', डॉ शैलेश कुमार सिंह'''
- **आय दोगुनी करने में अजवाइन की खेती की अहम भूमिका** 27
  गौरीशंकर वर्मा', डॉ आर.के. दोहरे'' एवं डॉ शेष नारायण सिंह'''
- **पोषण वाटिका का महत्व** 29
  साधना सिंह', दीप्ति गिरि' एवं मजूलता मिश्रा'
- **विषाक्त पौधों की विषाक्तता का पशुओं में प्रभाव, उपचार एवं बचाव के उपाय** 31
  डॉ विद्या सागर', डॉ एस.एन. लाल'' एवं डॉ ए.के. राय'''
- **अक्टूबर माह में किसान भाई क्या करें** 34
- **प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के** 35

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखक के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है

प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

डॉ. बिजेन्द्र सिंह
कुलपति
Dr. Bijendra Singh
Vice Chancellor

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224 229
(उ.प्र.), भारत
Acharya Narendra Deva University of Agriculture & Technology
Kumarganj, Ayodhya-224 229 (U.P.), India

सन्देश

कृषि, शिक्षा, शोध व प्रसार के क्षेत्र में सर्वांगीण विकास की कामना करते हुए आप तक यह सन्देश पहुँचाना चाहूंगा कि 21वीं सदी में हमारे सामने बहुत सी नई चुनौतियां हैं जिनका सामना नई तकनीकी एवं नई सोच के साथ करने की आवश्यकता है। यह बड़े गर्व की बात है कि आप सभी के सम्मिलित प्रयासों से हमारा देश खाद्यान्न में आत्मनिर्भर भी है और पर्याप्त भण्डार भी है, साथ ही सब्जी उत्पादन, फल उत्पादन तथा दुग्ध उत्पादन में दुनिया के अग्रणी देशों की श्रेणी में है। इस परिदृश्य के विपरीत दलहनों, तिलहनों में हमे अभी बहुत कुछ करना है। आज विश्व पटल पर तेजी से बदलते परिवेश में कृषि से जुड़े सभी लोगों का परम दायित्व है कि एक तरफ प्रति इकाई व्यक्ति को खाद्यान्न, फल, दूध, सब्जी, मछली एवं पौष्टिक अवयवों की सुलभता की सुनिश्चितता होनी चाहिए वहीं दूसरी तरफ दुनिया के बाजारों में मांग के अनुरूप कृषि उत्पादों को उत्पादित करके आधुनिक सूचना तकनीक के माध्यम से आपूर्ति व निर्यात के क्षेत्र में विद्यमान संभावनों का भरपूर लाभ उठाया जाये। इससे विदेशी मुद्रा को अर्जित करने एवं अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने एवं सुदृढ़ करने में सहयोग मिलेगा। इसके साथ ही साथ टिकाऊ खेती एवं उसमें विविधीकरण को समाहित करके वर्तमान कृषि से होने वाले आर्थिक लाभ को और अधिक बढ़ाये जाने की आवश्यकता है।

विश्वविद्यालय के 43वें स्थापना दिवस समारोह के शुभ अवसर पर प्रसार निदेशालय द्वारा प्रकाशित **पूर्वांचल खेती स्थापना दिवस विशेषांक** भी प्रकाशित किया जा रहा है। आशा एवं पूर्ण विश्वास है कि पूर्वांचल खेती मासिक पत्रिका में प्रकाशित लेख किसानों व ग्रामीणों को स्वस्थ व खुशहाल बनाने के साथ–साथ आगामी रबी फसलों के प्रतिपादन में उपयोगी साबित होकर किसान भाईयों की आर्थिक स्थिति को बढ़ाने में अहम भूमिका निभा सकेंगे।

(बिजेन्द्र सिंह)

ई–मेल : vcnduat2018@gmail.com, टेलीफैक्स : 05270–262097, 262161 (कार्यालय)

प्रोफेसर ए. पी. राव
निदेशक प्रसार
Prof. A. P. Rao
Director Extension

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224 229
(उ.प्र.), भारत
Acharya Narendra Deva University of Agriculture & Technology
Kumarganj, Ayodhya-224 229 (U.P.), India

सम्पादकीय

भारतीय ग्रामीण अर्थ व्यवस्था कृषि पर आधारित है एवं देश के सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी.) में कृषि क्षेत्र का 17.4 प्रतिशत योगदान है। देश का खाद्यान्न उत्पादन प्रत्येक वर्ष बढ़ रहा है और धान, गेंहूँ, दालों, गन्ना, कपास, फल–सब्जियों एवं दूध में विश्व के प्रमुख उत्पादको में से एक है। देश एवं प्रदेश सरकार कृषि उत्पादकता को बढ़ाने हेतु अनेक प्रयास किये जा रहे हैं। उत्तर प्रदेश में अपार प्राकृतिक संसाधन सुलभ है, जिसका समुचित सदुपयोग करके उत्पादकता में वुद्धि की जा सकती है। किन्तु प्रदेश में फसलों के अवशेषों का उचित प्रबन्ध करने पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। पिछले कुछ वर्षों में कम्बाइन से कटे प्रक्षेत्रों पर अवशेषों की अधिक मात्रा होने के कारण आग लगा कर जला दिया जा रहा है। फसल अवशेषो ंको जलाने से वातावरण दूषित और श्वास संबंधित बीमारियॉ बढ़ रही हैं। वायुमण्डल में वायु प्रदूषक एवं हरित गृह गैसों में वृद्धि हो रही है। जबकि मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा निरन्तर कम होने से उत्पादकता घट रही है या स्थिर हो गई है। इन अवशेषों को सही तरीके से कम्पोस्ट अथवा खेत में मिलाकर उपयोग करें तो पोषक तत्वों के बहुत बड़े अंश कर पूर्ति की जा सकती है। अवशेषों को एकत्र कर कम्पोस्ट, मशरूम उत्पादन, जैव ईंधन, बायोचार, बेलर–गीजर आदि अन्य वैकल्पिक उपयोग लिये जा सकते हैं। फसल अवशेषों के प्रबन्धन की समस्याओं को मध्य नजर रखते हुए केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा "इन–सीटू मैनेजमेंट फॉर क्राप रेज्ड्यू" योजना के तहत विभिन्न जनपदों में अवशेष प्रबन्धन हेतु कृषि मशीनरी प्रोत्साहन योजना प्रारम्भ की गई है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कृषि विज्ञान केन्द्रो ने अन्य विभागों जैसे कृषि विभाग के साथ मिल कर कृषकों को जागरूक किया जा रहा है।

पूर्वांचल खेती के इस अंक में अनेक व्यवहारिक लेख जैसे– **तिलहनी फसलों में गंधक का महत्व एवं प्रयोग विधि, गन्ने की फसल में खरपतवार प्रबन्धन, शिशु मक्का (बेबी कोर्न) की खेती, ब्रोकली की खेतीः अधिक आय का श्रोत, फसल अवशेष प्रबन्धन मृदा के लिए वरदान, मोटे अनाजों का पौष्टिक महत्व एवं उपयोगिता, आय दोगुनी करने में अजवाइन खेती की अहम भूमिका, मटर की वैज्ञानिक खेती, अमरूद को कीटों रोगों एवं व्याधियों से बचायें, श्वेत बटन मशरूम की खेती** आदि से सम्बन्धित लेख प्रकाशित किये गये हैं, जिससे किसान भाईयों को अवश्य लाभ होगा।

(ए.पी. राव)

टेलीफैक्स : 05270–262821 (कार्यालय), फैक्स : 05270–262821

जौ फसल की प्रगतिशील खेती

विपुल सिंह*, डॉ ए.पी. राव एवं अमरनाथ सिंह****

जौ पृथ्वी पर सबसे प्राचीन काल से उगाये जाने वाली फसलों में से एक है। अन्य रबी फसलों के मुकाबले जौ की खेती मौसम की विपरीत परिस्थितियों जैसे– सूखा, कम उपजाऊ मिटटी तथा हल्की लवणीय एवं क्षारीय भूमि पर उत्पादन के लिए अधिक सक्षम है। हमारे देश में जौ की खेती मुख्यतः राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, पंजाब व हरियाणा में की जाती है। इसकी खेती पर्वतीय राज्य हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड व जम्मू एवं कश्मीर में एक महत्वपूर्ण फसल के रूप में की जाती है।

जौ की उपयोगिता प्राचीन काल से रही है, इसका प्रयोग धार्मिक अनुष्ठान व विभिन्न औषधीय रूप में होता है। इसका उपयोग रोटी, सत्तू, विभिन्न प्रकार के मादक पेय, बिस्कुट, स्वास्थ्यवर्धक पेय व दवाइयाँ बनाने में किया जाता है। जानवरों में विशेषकर दुधारु पशुओं को यह हरा चारा, सूखी भूसी, साइलेज व फीड के रूप में खिलाया जाता है। उत्पादक जौ की वैज्ञानिक तकनीक से खेती कर के इसकी फसल से अच्छी उपज प्राप्त कर सकते है।

उपयुक्त जलवायु

जौ की खेती के लिए समशीतोष्ण जलवायु की आवश्यकता होती है। इसकी खेती के लिए अनुकूल तापमान बुवाई के समय 25 से 30 डिग्री सेंटीग्रेट उपयुक्त माना जाता है। इसकी खेती मुख्यतया असिंचित स्थानों पर अधिकतर की जाती है।

भूमि का चयन

जौ की खेती अनेक प्रकार की भूमियों जैसे बलुई, बलुई दोमट या दोमट भूमि में की जा सकती है। लेकिन दोमट भूमि जौ की खेती के लिए सर्वोत्तम होती है। क्षारीय एवं लवणीय भूमियों में सहनशील किस्मों की बुवाई करनी चाहिये। भूमि में जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिये।

खेत की तैयारी

जौ की अधिक पैदाकर प्राप्त करने के लिए भूमि की अच्छी प्रकार से तैयारी करनी चाहिये। खेत में खरपतवार नहीं रहने चाहिये तथा अच्छी प्रकार से जुताई करके मिट्टी भुरभुरी बना देनी चाहिये। खेत में पाटा लगाकर भूमि समतल एवं ढेलों रहित कर देनी चाहिये। खरीफ फसल की कटाई के पश्चात् डिस्क हैरो से जुताई करनी चाहिये। इसके बाद दो जुताई हैरो से करके पाटा लगा देना चाहिये। अन्तिम जुताई से पहले खेत में 25 किलोग्राम क्यूनालफॉस (1.5 प्रतिशत) या मिथाइल पैराथियोन (2 प्रतिशत) चूर्ण को समान रूप से भुरकना चाहिये।

अनुमोदित किस्में

जौ की खेती से अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने के लिए किसानों को अपने क्षेत्र की प्रचलित और अधिक उपज देने वाली किस्मों का चयन करना चाहिए, किस्मों का साथ में विकार रोधी भी होना आवश्यक है। कुछ प्रचलित और उन्नत किस्में इस प्रकार है, जैसे–

सिंचित व समय से बुवाई

डी डब्लू आर बी– 52, डी एल– 83, आर डी– 2668, आर डी– 2503, डी डब्लू आर– 28, आर डी– 2552, बी एच– 902, पी एल– 426 (पंजाब), आर डी– 2592 (राजस्थान) आदि प्रमुख है।

पी.एच.डी. (शस्य विज्ञान विषय),
निदेशक प्रसार– प्रसार निदेशालय और प्रशिक्षण सहायक– प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, (उ.प्र.)

सिंचित व देर से बुवाई

आर डी– 2508, डी एल– 88 आदि प्रमुख है।

असिंचित व समय से बुवाई

आर डी– 2508, आर डी– 2624, आर डी– 2660, पी एल– 419 (पंजाब) आदि प्रमुख है।

क्षारीय एवं लवणीय

आर डी– 2552, डी एल– 88, एन डी बी– 1173 आदि प्रमुख है।

माल्ट जौ

बी सी यु– 73 अल्फा– 93, डी डब्लू आर यु बी– 52 आदि प्रमुख है।

चारा के लिए

आर डी– 2715, आर डी– 2552 आदि प्रमुख है।

बीजदर

जौ की खेती के लिए समय पर बुवाई करने से 100 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। यदि बुवाई देरी से की गई है तो बीज की मात्रा में 15 से 25 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी कर देनी चाहिये।

बीज उपचार

जौ की खेती से उपज प्राप्त करने के लिए अच्छी गुणवत्ता वाले बीज की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जहाँ तक संम्भव हो सके, बीज, राष्ट्रीय बीज निगम, राज्य बीज निगम, भारतीय राज्य फार्म निगम, अनुसंन्धान संस्थानों एवं कृषि विश्वविद्यालयों से खरीदना चाहिये। बहुत से कीड़ों एवं बीमारियों के प्रकोप को रोकने के लिए बीज का उपचारित होना बहुत आवश्यक है।

कंडुआ व स्मट रोग की रोकथाम के लिए बीज को वीटावैक्स या मैन्कोजैब 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करना चाहिये। दीमक की रोकथाम के लिए 100 किलोग्राम बीज को क्लोरोपाइरीफोस 20 ई सी की 150 मिलीलीटर द्वारा बीज को उपचारित करके बुवाई करनी चाहिये।

बुवाई का समय

जौ की खेती हेतु बुवाई का उचित समय नवम्बर के प्रथम सप्ताह से आखिरी सप्ताह तक होता है। लेकिन देरी होने पर बुवाई मध्य दिसम्बर तक की जा सकती है।

बुवाई की विधि

बुवाई पलेवा करके ही करनी चाहिये तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी 22.5 सेंटीमीटर एवं देरी से बुवाई की स्थिति में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 25 सेंटीमीटर रखनी चाहिये। बीज को 4 से 5 सेंटीमीटर की गहराई पर डालें अधिक गहराई पर डालने से जमाव कम एवं देर से होता है।

खाद एवं उर्वरक

जौ की सिंचित फसल के लिए 60 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40 किलोग्राम फास्फोरस और 30 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टेयर की आवश्यकता होती है। असिंचित क्षेत्रों के लिए 40 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40 किलोग्राम फास्फोरस और 30 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टेयर मात्रा पर्याप्त होती है। खेत की तैयारी के समय 7 से 10 टन गोबर या कम्पोस्ट खाद डालकर अच्छी प्रकार से मिट्टी में मिला देनी चाहिये।

सिंचित क्षेत्रों के लिए फास्फोरस और पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा एवं नाइट्रोजन की आधी मात्रा को मिलाकर बुवाई के समय देना चाहिये। असिंचित क्षेत्रों के लिए सम्पूर्ण पोटाश 30 किलोग्राम, फास्फोरस 40 किलोग्राम व नाइट्रोजन 40 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के समय पंक्तियों में देनी चाहिये। सिंचित क्षेत्रों के लिए शेष 30 किलोग्राम नाइट्रोजन की मात्रा प्रथम सिंचाई के साथ देनी चाहिये।

सिंचाई प्रबंधन

जौ की खेती से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 4 से 5 सिंचाई पर्याप्त होती है। प्रथम सिंचाई बुवाई के 25 से 30 दिन बाद करनी चाहिये। इस समय पौधों की जड़ो का विकास होता है। दूसरी सिंचाई 40 से 45 दिन पश्चात् देने से फुटान अच्छी प्रकार होता है। इसके पश्चात् तीसरी सिंचाई फूल आने पर एवं चौथी सिंचाई दाना दूधिया अवस्था में आने पर करनी चाहिये।

खरपतवार नियंत्रण

जौ की खेती में पौधों के साथ अनेक प्रकार के खरपतवार जैसे— बथुआ, खरतुआ, फ्लेरिस माइनर, हिरणखुरी, मौरवा, प्याजी, दूब इत्यादि उगते हैं तथा नमी, पोषक तत्व, प्रकाश एवं स्थान के लिए फसल के पौधों के साथ प्रतिस्पर्धा कर उनकी वृद्धि और विकास को प्रभावित करते हैं एवं फसल उत्पादन कम करते हैं। फसल की अच्छी बढ़कर के लिए फसल को प्रथम 30 से 40 दिनों तक खरपतवार मुक्त रखना आवश्यक है। जौ की फसल में खरपतवार नियंत्रण के लिए फसल की बुवाई के दो दिन पश्चात् तक पेन्डीमैथालीन नामक खरपतवार नाशी की 3.30 लीटर मात्रा को 500 से 600 लीटर पानी में घोल बनाकर समान रूप से छिडकाव कर देना चाहिये।

इसके बाद जब फसल 30 से 40 दिनों की हो जाये तो 2, 4—डी 72 ई सी खरपतवार नाशी की एक लीटर मात्रा को 500 लीटर पानी में घोल बनाकर समान रूप से छिड़काव कर देना चाहिये। यदि खेत में गुल्ली डन्डा (फ्लेरिस माइनर) का अधिक प्रकोप दिखाई दे तो प्रथम सिंचाई के बाद आईसोप्रोटूरोन 75 प्रतिशत की 1.25 किलोग्राम मात्रा का 500 लीटर पानी में घोल बनाकर समान रूप से छिड़काव करना चाहिये।

रोग और रोकथाम

आवृत कंडुआ रोग

इस रोग के प्रकोप से बालियों में दाने के स्थान पर फफूँद के काले जीवाणु बन जाते हैं, जो मजबूत झिल्ली से ढके रहते हैं। रोकथाम हेतु यह बीज जनित रोग है, इसलिए प्रमाणित बीज का उपयोग करना चाहिए। कार्बण्डाजिम या दूसरे फफूंदनाशी दवा से बीज को उपचारित कर बुवाई करना चाहिए। बौनीमिल 0.2 प्रतिशत दवा से बीजोपचार करने पर आवृत कंडुआ रोग का प्रभावी नियंत्रण माना गया है।

रतुआ तथा अंगमारी

विभिन्न परीक्षणों से ज्ञात हुआ है, कि रतुआ तथा अंगमारी के नियंत्रण के लिए 0.2 प्रतिशत डाईथेन एम— 45 का चार बार छिड़काव करना चाहिए। इसके अतिरिक्त जीनेव तथा सेन्डोविट का 5 छिड़काव 14 दिन के अंतराल पर प्रभावकारी पाया गया है।

कीट एवं रोकथाम

जौ की खेती को आर्मीवर्म, वीविल, कटवर्म, तनाछेदक, चेपा समय—समय पर हानि पहुँचाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए डाइमैथोमेट या रोगर का छिड़काव कर सकते है।

फसल कटाई एवं गहाई

फसल के पौधे और बालियाँ जब सूखकर पीली या भूरी पड़ जाये तो कटाई कर लेनी चाहिये। अधिक पकने पर बालियाँ गिरने की आशंका अधिक हो जाती है। फसल की कटाई करने के बाद अच्छी प्रकार सूखाकर थ्रेसर द्वारा दाने को भूसे से अलग कर देना चाहिये तथा अच्छी प्रकार सूखाकर एवं साफ करके बोरों में भरकर सुरक्षित स्थान पर भण्डारित कर लेना चाहिये।

पैदावार

अनुकूल परिस्थितियों में उपरोक्त उन्नत तकनीक द्वारा जौ की खेती करने पर एक हेक्टेयर क्षेत्र में 35 से 50 क्विंटल दाने एवं 50 से 75 कुन्तल भूसे की उपज प्राप्त की जा सकती है।

रबी मौसम में उगाये जाने वाली विभिन्न प्रकार की सब्जियों के बारे में तकनीकी जानकारी

*डॉ राजकुमार पाठक, **डॉ वी.पी. पाण्डेय, ***नवनीत कुमार, *संदीप कुमार दिवाकर

रबी मौसम में उगाये जाने वाली विभिन्न प्रकार की सब्जियों के बारे में तकनीकी जानकारी सारणी–1 में वर्णित है

सब्जी	उन्नत किस्में	बीज की मात्रा प्रति हेक्टेयर	बुवाई का समय	बुवाई / रोपाई की दूरी (सेमी)	उर्वरक (एन0पी0के0 किग्रा0) (टन) / हेक्टेयर
टमाटर	पूसा–120, पूसा रूबी, पूसा शीतल, पूसा हाइब्रिड–4, अर्का अनन्या, अर्का विकास, अर्का सौरभ, काशी हेमन्त	400–500 ग्रा0 हाइब्रिड 150–200 ग्रा0	अक्टूबर–नवंबर, फरवरी, जुलाई–अगस्त	60x45	100:50:50 10–15 टन
बैंगन	पूसा पर्पल, लॉग, पूसा पर्पल कलस्टर, पूसा उत्तम, पूसा बिन्दू, अर्का शील, पूसा अंकुर, पूसा हाइब्रिड–5, पूसा हाइब्रिड–6, अर्का नवनीत, अर्का आनन्द, काशी, संदेश काशी कोमल, पंत सम्राट	400–500 ग्रा0 हाइब्रिड 150–200 ग्रा0	दिसंबर–जनवरी, मई–जून	60-75x60	100:50:50 10–15 टन
मिर्च	पूसा ज्वाला, पूसा सदाबहार, अर्का लोहित, अर्का सुफल, काशी अर्ली, मिर्च–101, पंत सी–1, जवाहर अग्रि	600–700 ग्रा0	दिसंबर–जनवरी, जून–जुलाई	45-60x30-45	120:50:50 10–15 टन
फूलगोभी	पूसा स्नोबाल के–1, पूसा दीपाली	400–500 ग्रा0	अक्टूबर–नवंबर	60x45	120:60:60 10–15 टन
पत्तागोभी	गोल्डन एंकर, पूसा ड्रम हैड, पूसा अगेती, प्राइड ऑफ इंडिया	400–500 ग्रा0	सितंबर–अक्टूबर	45-50x30-40	120:60:60 10–15 टन
गांठ गोभी	व्हाइट वियना, पर्पल वियना	1–1.5 किग्रा0	सितंबर–नवंबर	30x20	120:60:60 10–15 टन

*सहायक प्राध्यापक, *विभागाध्यक्ष, सब्जी विज्ञान विभाग, ***शोध छात्र मृदा विज्ञान विभाग,
आचार्य नरेन्द्र देव कृशि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

मटर	बोनविले, अर्किल, पूसा प्रगति, जवाहर मटर–4	80–100 किग्रा0	अक्टूबर–नवंबर	30x8-10	30:60:60 10–15 टन
गाजर	पूसा मेघाली, नेन्टिस पूसा केसर	5–6 किग्रा0	सितंबर–अक्टूबर	30x5-10	60:40:40 10–15 टन
मूली	पूसा चेतकी, जापानीज व्हाइट, पूसा रश्मि, पूसा देशी, पूसा हिमानी, अर्का निषांत	8–10 किग्रा0	सितंबर–फरवरी	30x10	50:40:40 10–15 टन
आलू	कुफरी सिंदूरी, कुफरी चंद्रमुखी, कुफरी ज्योति, कुफरी जवाहर, कुफरी चिप्सोना–3, 4, कुफरी आनन्द, कुफरी फ्राई सोना, कुफरी गंगा, कुफरी लालिमा, कुफरी नीलकंठ	25–30 किग्रा0	अक्टूबर–नवंबर	60x20	150:100:120 10–15 टन
प्याज	पूसा व्हाइट फ्लैट, एग्री फाउण्ड लाइट रेड	10–12 किग्रा0	अक्टूबर–नवंबर	15x10	150:60:60 10–15 टन
पालक	आलग्रीन, पूसा हरित, पूसा भारती, पूसा ज्योति	25–30 किग्रा0	सितंबर, दिसंबर	20x5	50:40:40 10–15 टन
शलजम	पर्पल टॉप व्हाइट, ग्लोब पूसा–स्वर्णिमा, पूसा चंद्रिमा, पूसा श्वेता	2.5–3.5 किग्रा0	अगस्त, अक्टूबर	30x5	60:40:40 10–15 टन
मैथी	पूसा अर्ली बंचिग, पूसा केसरी, आर एमटी–11	25 किग्रा0	सितंबर–अक्टूबर	25x10	40:30:30 10–15 टन

लेखकों से अनुरोध

- लेख भेजने से पहले यह सुनिश्चित कर लें कि आप पूर्वांचल खेती की वार्षिक सदस्यता ग्रहण कर लिए हैं, जो रूपया दौ सौ बीस (220.00) मात्र ही देय होगा। एक लेख में जितने भी लेख होंगे सभी की सदस्यता अनिवार्य होगी।
- लेख भेजते समय पूर्वांचल खेती की सदस्य संख्या तथा सदस्यता अवधि सभी लेखकों को लेख के ऊपर लिखना अनिवार्य होगा।
- लेख फसलोत्पादन, सब्जी उत्पादन, बागवानी, गृह विज्ञान, मत्स्य अथवा पशुपालन आदि विषयों पर आधारित हों।
- लेख दो प्रतियों में डबल स्पेस में टाप हों।
- लेख आकर्षक एवं अपने में ठोस हों।
- लेख आंकड़े से भरपूर हो।
- सम्बन्धित माह तथा मौसम की जानकारी से छः माह पूर्व प्रेषित हो।

प्रधान सम्पादक

मटर की वैज्ञानिक खेती

मंजीत कुमार*, डॉ सी. एन. राम**, डॉ जी. सी. यादव*, श्रवण कुमार* एंव राजन चौधरी*

मटर एक प्रमुख सब्जी की फसल है। यह कम समय में अधिक आय देने वाली फसल है। इसकी हरी फलियों से अच्छी आमदनी प्राप्त की जा सकती है। दलहनी फसल होने की कारण भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाती है। इसकी हरी फलियों का प्रयोग सब्जियों के बीजों को परीरक्षण के द्वारा डिब्बाबंदी करके बेमौसम में खाने के लिए प्रयोग किया जाता है।

उन्नतिशील किस्में

आर्किल

यह 60–65 दिन में तैयार होने वाली किस्म है। इस के पौधे छोटे, फलियां अच्छी तरह से भरी हुई 8–10 सेंमी लंबी तथा 7–8 दाने वाली होती है। इसकी औसत उपज 40–70 कुंतल प्रति हेक्टेयर है।

आजाद मटर 3

इस के पौधे मध्यम ऊंचाई वाले, फलियां बड़ी सुडौल और हरे रंग की होती है। बुवाई के लगभग 70–80 दिन बाद पहली तुड़ाई की जाती है। इसकी औसत उपज लगभग 70 कुंतल प्रति हेक्टेयर है ।

मटर अगेती

इस के पौधे छोटे सीधे हरे रंग के तथा जल्दी बुवाई के लिए उपयुक्त है। यह लगभग 7 सप्ताह में तुड़ाई के लिए तैयार हो जाती है। प्रत्येक पौधे पर 12–14 फलियां होती है। इसकी उपज 70–80 कुंतल प्रति हेक्टेयर है।

बोनविले

यह अमेरिका से लायी गयी किस्म है। इस किस्म के पौधे 60–70 सेमी तक ऊंचे बढ़ते है। फलियां गोल , जिसमे 8–10 हरे व मीठे होते है। यह किस्म 135 दिन में तैयार हो जाती है।प्रति हेक्टेयर 100 क्विंटल ह्री फली मिल जाती है।

भूमि और भूमि की तैयारी इसकी खेती सभी प्रकार की भूमियों में की जाती है। परंतु अच्छे जल निकास वाली बलुई दोमट भूमि जिसका पीएच मान 6–7.30 के बीच हो उपयुक्त मानी जाती है । यदि नमी की कमी हो तो बोने से पहले पलेवा कर देना चाहिए। भूमि की अच्छी तरह से जुताई करके मिट्टी भुरभुरी बना लेना चाहिए। बुवाई के समय भूमि में अंकुरण के लिए पर्याप्त नमी होना आवश्यक है।

बुवाई का समय

अगेती किस्में

10 अक्टूबर से 10 नवंबर तक।

मध्यम अवधि वाली प्रजातियाँ

अक्टूबर के प्रथम सप्ताह से नवंबर के अंत तक।

बीज की मात्रा

अगेती किस्मों के लिए 120–125 किग्रा तथा मध्यम अवधि वाली प्रजातियों के लिए 75–100 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है।

खाद एवं उर्वरक

मटर के खेत की अंतिम जुताई के समय 20 टन सड़ी गोबर या कंपोस्ट की खाद खेत में मिला देना चाहिए। इसकी अच्छी फसल के लिए 50 किग्रा नत्रजन 50–70 किग्रा फास्फोरस तथा 30–40 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से तत्व के रूप में देना आवश्यक होता

शोध छात्र*, सह–प्राध्यापक**, सब्जी विज्ञान विभाग,
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

है। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के पहले मिट्टी में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। शेष बची हुई नत्रजन की आधी मात्रा बुवाई के लगभग 25–30 दिन बाद टॉप ड्रेसिंग के रूप में देना चाहिए।

बीज की बुवाई तथा दूरी

बीज की बुवाई सीड ड्रिल या देसी हल से कतारों में की जाती है। जल्दी पकने वाली किस्मों के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सेमी व पौधे से पौधे की दूरी 5–7 सेमी रखनी चाहिए। बीज की बुवाई 5– 7 सेमी की गहराई पर करें। बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी का होना आवश्यक है। बुवाई से पहले बीज को कैप्टान 3 ग्राम प्रति किग्रा बीज या वेनलेट या बाविस्टीन 2 ग्राम प्रति किग्रा बीज से उपचारित कर लेना चाहिए। बीज की बुवाई से पूर्व यदि जीवाणु कल्चर से उपचारित कर लिया जाए तो फसल की बढ़वार और उपज पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। इसके लिए 1.5 किग्रा राइजोबियम कल्चर को 10ः गुड़ के घोल में मिलाकर प्रति हेक्टेयर बीजों को अच्छी तरह उपचारित करके छाया में सुखा लेना चाहिए। इसके बाद उसी दिन बुवाई कर देना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

रसायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिए बुवाई से 2–3 दिन पूर्व 2–2.5 लीटर बेसालीन प्रति हेक्टेयर की दर से पानी में घोलकर मिट्टी मे ंमिला दें या बुवाई के 1 दिन बाद 3 लीटर स्टांप पानी में घोलकर छिड़काव करें ।

सिंचाई

बुवाई के बाद पहली सिंचाई फूल आते समय करनी चाहिए आवश्यकता पड़ने पर दूसरी सिंचाई फलियाँ बनते समय करनी चाहिए।

रोग एवं व्याधियाँ

1 उकठा रोग

यह फफूंद जनित रोग है जिससे प्रभावित पत्तिया ं पीली पड़ जाती है। तथा नीचे की तरफ मुड़ जाती है। फलियां पूरी तरह भरती नही है। बीमारी का प्रकोप अधिक हो जाए तो फलियों में बीज नहीं बनते और तने के नीचे के भाग का रंग बदल जाता है।

नियंत्रण

बुवाई से पूर्व बीज को 3 ग्राम बाविस्टीन प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित कर लेना चाहिए। अधिक प्रकोप वाले खेतो में मटर की जल्दी बुवाई नहीं करनी चाहिए

2 रस्ट

यह बीमारी अधिक आर्द्रता वाले क्षेत्रों में पाई जाती है। इस के प्रकोप से पौधे जल्दी सूख जाते हैं। तथा उपज कम हो जाती है। यह रोग फँफूंदी द्वारा ही फैलता है। प्रारंभ में पत्तियों की निचली सतह पर छोटे–छोटे सफेद रंग के उठे हुए धब्बे बनते हैं। धीरे–धीरे इस धब्बे का रंग भूरा हो जाता है और अंत में सूख जाता है।

नियंत्रण

इस रोग का प्रकोप होने पर डायथेन एम–45 का 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

3 चूर्णी फफूँद

इस रोग से प्रभावित पौधे की पत्तियों पर सफेद रंग के पाउडर के समान धब्बे बन जाते हैं। इससे फलियों में दाने नहीं बनते हैं तथा पूरा पौधा सूख जाने से 60–70 प्रतिशत तक उपज में कमी हो जाती है।

नियंत्रण

रोग के लक्षण आते ही केलेक्सिन नामक दवा की 500 मिली या बाविस्टीन 1 ग्राम मात्रा को प्रति लीटर पानी में घोलकर 10 दिन के अंतराल पर 2 से 3 बार छिड़काव करें। पत्तियां काली पड़ जाती है कई धब्बों के आपस में मिलने से पत्तियां पीली होकर सूख जाती है।

4 बैक्टीरियल ब्लाइट

यह रोग स्यूडोमोनास सिरिंगी नामक जीवाणु के कारण होता है। इस रोग के कारण पत्तियों तनों और फलियों के ऊपर जल सिक्त धब्बों का निर्माण हो जाता है। धब्बों का व्यास 3 मिमी तक हो सकता है। देरी से प्रकोप होने पर 25 प्रतिशत तक क्षति हो सकती है परंतु जल्दी प्रकोप की स्थिति में पौधा मुरझा जाता है और अंत में मर जाता है।

नियंत्रण

रोग का प्रकोप होने पर खड़ी फसल में स्ट्रेप्टोसाक्लिन (0.01) घोल का छिड़काव करें। यदि आवश्यक हो तो 7 दिन बाद दुबारा छिड़काव करें।

कीट

1. मटर का चेपां

यह बहुत छोटे–छोटे हरे रंग के कीट होते हैं। जो पत्तियों और कोमल शाखाओं का रस चूसते हैं। इस कीट का आक्रमण जनवरी में होता है यह कीट विषाणु रोग फैलाने में भी सहायता करते हैं।

नियंत्रण

इस कीट के नियंत्रण हेतु मैलाथियान 50 ई सी का 0.1 प्रतिशत घोल या 2 सी सी मेटासिस्टाक्स प्रति लीटर पानी के घोल का 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

2. मटर की बीवील

इस कीट की मादा फलियों पर अंडे देती हैं। उनसे निकले डिम्भक फलियों में छेद करके उन्हें क्षति पहुंचाते हैं।

नियंत्रण

इस कीट के नियंत्रण हेतु 0.2 प्रतिशत सेविन के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

3. फली छेदक

देश के कुछ भागों में इस कीट का प्रकोप अत्यंत गंभीर होता है। यह कीट पहले तो फली की सतह को खाता है। फिर छिद्र करके फली में प्रवेश कर जाता है और दानों को खाता है। जिसके कारण उपज में भारी कमी हो जाती है।

नियंत्रण

इन्डोसल्फान 35 ई सी के .2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

4. पर्ण सुरंग (लीफ माइनर)

यह कीट पत्तियों में सुरंग बना कर रहता है और पर्ण हरित को खा जाता है। पत्तियों पर सफेद धारियाँ दिखाई देती है। इससे पत्तियों को भोजन निर्माण में बाधा पड़ती है।

नियंत्रण

मोनोक्रोटोफास 365 ई सी 0.04 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए।

फसल की तुड़ाई

मटर की फसल की फलियों की तोड़ाई उचित अवस्था में करना नितांत आवश्यक है। जो इसकी उगाई जाने वाली किस्मों पर निर्भर करती है। फलियों की तुड़ाई शाम या सुबह को करनी चाहिए, फलियों की तोड़ाई सावधानी से करनी चाहिए। क्योंकि एक छोटा सा झटका भी पौधे को उखाड़ सकता है।

उपज

मटर की उपज कई बातों पर निर्भर करती है। जिनमें भूमि की उर्वरा शक्ति उगाई जाने वाली किस्म व फसल की देखभाल प्रमुख है। अगेती, मध्यम देर से तैयार होने वाली किस्में क्रमशः 30–40 कुन्तल और 70–80 क्विंटल प्रति हेक्टेयर हरी फलियां दे देती है।

गन्ने की फसल में खरपतवार प्रबन्धन

डॉ राम प्रताप सिंह

हमारे देश में उगायी जाने वाली नकदी फसलों में गन्ने का प्रमुख स्थान है। यह एक बहुवर्षीय फसल है, जो शरद (अक्टूबर), बसन्त (फरवरी–मार्च) तथा अधसाली (जुलाई) में बोई जाती है। अधसाली गन्ने की बुवाई मुख्यतः महाराष्ट्र में की जाती है, जबकि भारत में ज्यादातर गन्ने की बुवाई बसन्त ऋतु (फरवरी–मार्च) में की जाती है। इसकी बुवाई 75 से 90 सेंटीमीटर की दूरी पर कतारों में की जाती है। गन्ना, बुवाई के लगभग 3–4 सप्ताह बाद उगता है, परन्तु प्रारम्भिक अवस्था में इसकी बढ़वार अत्यन्त धीमी होती है। पंक्तियों के बीच पर्याप्त दूरी एवं प्रारम्भिक अवस्था में इसकी बढ़वार खरपतवारों के बढ़ने तथा फैलने में अत्यधिक सहायक होती है। इसलिये इन खरपतवारों का यदि समय पर नियंत्रण नहीं किया गया तो गन्ने की पैदावार और गुणवत्ता में कमी आती है।

प्रमुख खरपतवार

गन्ना पूरे वर्षभर की फसल है इसलिये इसमें रबी, खरीफ तथा जायद मौसमों में खरपतवार उगते हैं। सितम्बर–अक्टूबर में बोये गये गन्ने की प्रारम्भिक अवस्था में चौड़ी पत्ती के खरपतवार ज्यादा उगते हैं तथा बाद में फरवरी–मार्च में बोये गये गन्ने में खरीफ खरपतवार उगने लगते हैं। गन्ने की फसल में उगने वाले खरपतवारों को मुख्यतः तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता है। (सारिणी–1)

सारिणी–1 गन्ने में उगने वाले प्रमुख खरपतवार

खरपतवार के प्रकार	शरद कालीन गन्ना	बसन्त कालीन गन्ना
चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार	बथुवा (चिनोपोडियम एल्बम) मटरी (लेथाइरस अफाका) अंकरी (विसिया सेवाइवा / हिरसुटा) सोया (फ्यूमेरिया पारवीफ्लोरा) हिरनखूरी(कानवावुलस आरवेन्सिस) भांग (केनावेन्सिस सेटाइवा) सेंजी (मेलिलोटस प्रजाति) सत्यानासी (आर्जेमोन मैक्सिकाना) कासनी (चिकोरियम इन्टाइबस)	पत्थरचटा (ट्राइन्थमा मोनोगाइना) अगेव (स्ट्रइगा प्रजाति) कनकवा (कमेलिना वेंघालेन्सिस) हजारदाना (फाइलेन्थस निरूरी) सफेद मुर्ग (सिलोसिया आर्जेन्सिया) गोखरू (जैन्थियम स्टूमेरियम) जंगली जूट (कोरकोरस प्रजाति) जंगली चौलाई (अमरेंथस विरिडिस) महकुआ (ऐजेरेटम प्रजाति) दुद्धी (यूफोरबिया प्रजाति) कालादाना (आइपोमिया हेडेरिसिया)
संकरी पत्ती वाले	दूबघास (साइनोडान डैक्टिलान)	संवा (इकाइनोक्लोआ प्रजाति) बनचरी (सोरघम हेलेपेन्स) डिजिटैरिया प्रजाति कोदों (इल्यूसिन इंडिका) दूबघास (साइनोडान डक्टिलान)
मोथाकुल	मोथा (साइप्रेस रोटण्डस)	मोथा (साइप्रेस रोटण्डस), (साइप्रेस इरिया) आदि।

सहायक प्राध्यापक (शस्य विज्ञान), शस्य विज्ञान विभाग,
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या–224229 (उ.प्र.)

खरपतवारों से हानियाँ

गन्ने की फसल खेत में 12 से 18 महीने तक रहती हैं। इसके साथ ही इसे अत्यधिक खाद एवं पानी की आवश्यकता होती है। ये परिस्थितियॉ़ खरपतवारों ंकी वृद्धि एवं विकास में सहायक होती हैं। गन्ने की फसल में खरपतवार फसल की तुलना में 5.8 गुना नाइट्रोजन, 7.8 गुना फास्फोरस एवं तीन गुना पोटाश उपयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त खरपतवार नमी का एक बड़ा हिस्सा शोषित कर लेते हैं तथा फसल को आवश्यक प्रकाश एवं स्थान से भी वंचित रखते हैं। इसक अतिरिक्त खरपतवार फसलों में लगने वाले कीटों एवं रोगों के जीवाणुओं को भी आश्रय देते हैं। खरपतवारों की संख्या एवं प्रजाति के अनुसार गन्ने की पैदावार में 14 से 75 प्रतिशत तक की कमी अंकी गई है तथा साथ ही साथ चीनी की मात्रा एवं गुणवत्ता में भी कमी आती है।

खरपतवारों की रोकथाम का समय

गन्ने में खरपतवारों की मुख्य समस्या बोने से लेकर मानसून शुरू होने तक रहती है। इस समय गन्ने पौधे छोटे होते हैं तथा खरपतवारों से मुकाबला नहीं कर पाते हैं। अतः गन्ने की फसल को शुरू से खरपतवार रहित रखना आर्थिक दृष्टि से लाभदायक नहीं होता, इसलिये खरपतवार प्रतिस्पर्धा की क्रान्तिक अवस्था में इनकी रोकथाम जरूरी होती है। गन्ने में यह अवस्था बुवाई के 40–70 दिन के बीच आती है।

नियंत्रण के उपाय

गन्ने की फसल में खरपतवार नियंत्रण की विधियाँ निम्न हैं–

(1) यांत्रिक विधियॉ

जहां पर कृषि कार्य करने वाले श्रमिक सरलता एवं कम लागत में मिलते हैं वहॉ पर गन्ने की फसल में उगने वाले खरपतवारों को खुरपी हो अथवा कुदाली से नष्ट किया जा सकता है। फसल बोने से पूर्व की जुलाई भी खरपतवारों की संख्या में कमी लगती है, चूॅकि गन्ने की फसल का जमाव बुवाई के 25–30 दिन बाद होता है तथा तब तक खरपतवार काफी संख्या में उग आते हैं इसलिये फसल बोने के एक–दो सप्ताह बाद गुड़ाई करने से खरपतवारों को नष्ट किया जा सकता हैं। इसे अन्धी गुड़ाई कहते हैं। इसके अलावा बैलों द्वारा चलाये जाने वाले कल्टीवेटर से गन्ने की पंक्तियों के बीच के खरपतवार पर प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है।

(2) ट्रैश मल्चिंग (सूखी पत्ती बिछाकर)

गन्ने की पंक्तियों के बीच खाली स्थान में गन्ने की सूखी पत्तियों या पुवाल की 7–12 सेमी मोटी तह इस प्रकार से बिछा दी जाये की गन्ने का अंकुर न ढ़कने पाये तथा केवल खाली स्थान ढका रहे। ऐसा करने पर खरपतवार ढक जाते हैं तथा प्रकाश न मिलने के कारण पीली पड़कर सूख जाते हैं। इससे खेत में नमी भी सुरक्षित रहती है।

(3) अर्न्तवर्ती फसलों की बुवाई

चूॅकि गन्ने के कतारों की बीच खाली जगह ज्यादा होती है तथा इसी खाली स्थान में खरपतवार अधिक उगते हैं, इस लिये इस खाली स्थान में कम अवधि वाली तथा तेज बढ़ने वाली फसलें उगाने से न केवल खरपतवारों पर काफी हद तक काबू पाया जा सकता है। बल्कि प्रति हेक्टेयर पैदावार व आमदनी में भी बढ़ोत्तरी की जा सकती है। शरद कालीन गन्ने के साथ आलू, गेहूॅ, लाही (तोरिया) एवं मसूर आदि को बोया जा सकता है तथा बसन्त कालीन गन्ने के साथ मूॅग एवं उर्द की फसल ली जा सकती है। इसमें ध्यान देने वाली बात यह है कि इन फसलों की कम अवधि वाली तथा तेज बढ़ने वाली प्रजातियों का चुनाव करें।

(4) गन्ने के अच्छे बीज का चुनाव, बीजोपचार, भूमि में कीटनाशक दवाओं का प्रयोग एवं खाद एवं उर्वरक तथा सिंचाई की उचित मात्रा इनके प्रयोग से जहॉ एक ओर फसल का अंकुरण एवं वृद्धि अच्छी होती है तथा फसल की बढ़वार अधिक होती है, वहीं दूसरी ओर स्वस्थ पौधे खरपतवारों से प्रतियोगिता करने की क्षमता रखते हैं।

(5) शाकनाशी प्रयोग द्वारा

यॉन्त्रिक विधि से गन्ने की फसल में खरपतवार नियंत्रण में कुछ कठिनाइयॉ आती है जैसे

(अ) यॉन्त्रिक विधि से निराई

गुड़ाई वर्षा ऋतु से पहले ही सम्भव है क्योंकि वर्षा ऋतु में खेत में हमेशा नमी रहने से निकाई–गुड़ाई यंत्रों का चलना सम्भव नहीं होगा।

(ब) यॉन्त्रिक विधि से निकाई

गुड़ाई काफी खर्चीली एवं इसमें समय बहुत लगता है। इस लिये खरपतवारों को क्रान्तिक अवस्था में नियंत्रित करने में कठिनाई आती है।

(स) कतारों में उगे खरपतवारों का नियंत्रण नहीं हो पाता है।

उपरोक्त कठिनाइयों को देखते हुए गन्ने की फसल में शाकनाशियों का प्रयोग जहां एक तरफ कम खर्चीला है वहीं दूसरी तरफ इससे खरपतवारों का समय से नियंत्रण हो जाता है तथा समय की बचत भी होती है।

गन्ने की फसल में खरपतवारों को नष्ट करने के लिये बहुत से शाकनाशी उपलब्ध हैं जिनका प्रयोग अंकुरण के पूर्व व बाद में किया जा सकता है, इनमें प्रमुख हैं।

एट्राजिन (एट्राटाफ, धानुजीन, सोलारो)

गन्ने में एक वर्षीय चौडी पत्ती दालें, घास कुल के खरपतवारों तथा मोथा को नष्ट करने के लिये यह एक प्रभावी शाकनाशी है। इनका प्रयोग गन्ने की बुवाई के बाद तुरन्त उगने के पहले किया जाता है। भारी भूमियों में 2.0 से 2.5 किलोग्राम सक्रिय तत्व/हेक्टेयर तथा हल्की भूमियों में 1.0 से 1.5. किलोग्राम/हेक्टेयर मात्रा पर्याप्त होती है।

मेट्राब्यूजीन (सेंकार, टाटा मैट्री, लेक्सोन)

यह एक अत्यन्त प्रभावशाली शाकनाशी है। इसका प्रयोग बुवाई के तुरन्त बाद अथवा अंकुरण पूर्व किया जाता है। इसका प्रयोग 5 से 10 प्रतिशत गन्ना उगने पर भी किया जा सकता है। इस शाकनाशी की 1.0 से 1.5 किलोग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होती है। इसके प्रयोग से प्रमुख खरपतवार जैसे– मोथा, कोंदो, डिजिटैरिया, पथरचटा आदि का प्रभावी नियंत्रण हो जाता है।

2,4 डी (एग्रोडोन–48, वीडमार, टेफासाइड, ईर्वीटाक्स)

चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों तथा मोथा के नियंत्रण के लिये इसका प्रयोग किया जाता है। इसकी 1.0 से 2.5 किलोग्राम सक्रिय तत्व/हेक्टेयर मात्रा बुवाई के तुरन्त बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व प्रयोग करने से संतोषजनक परिणाम प्राप्त हुआ है। गन्ने की फसल में अंकुरण के बाद इस रसायन की 1.0 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर मात्र प्रयोग करने से चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार जैसे पथरचटा, नूनिया, छोटा गोखरू आदि का प्रभावी नियंत्रण हो जाता है।

डाइयूरान (एग्रोमैक्स, कारमेक्स, क्लास)

इस खरपतवार नाशी को 2.5 से 3.0 किलोग्राम सक्रिय तत्व/हेक्टेयर बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण पूर्व प्रयोग करने से खरपतवारों का अच्छी तरह से नियंत्रण हो जाता है तथा गन्ने की फसल पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता।

पैराक्वाट (ग्रेमेक्सोन)

इस खरपतवार नाशी रसायन की 0.5 से 1.0 किलोग्राम सक्रिय तत्व मात्रा को 5–10 प्रतिशत गन्ना उगने पर प्रयोग करने से सभी प्रकार के खरपतवारों प्रभावी नियंत्रण हो जाता है।

एलाक्लोर (लासो)

घास कुल के खरपतवारों तथा मोथा को नष्ट करने के लिये इस शाकनाशी रसायन की 2–3 किलोग्राम मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण पूर्व प्रयोग करना चाहिए।

नोट–खरपतवारनाशी रसायनों की आवश्यक मात्रा को 600 लीटर पानी में प्रति हेक्टेयर के हिसाब से घोल बनाकर समान रूप से छिड़काव करना चाहिए।

एकीकृत खरपतवार नियंत्रण

गन्ने की कतारों के बीच अधिक दूरी होने के कारण यांत्रिक विधि, मल्चिंग एवं रसायनिक विधि आदि तरीकों का प्रयोग साथ–साथ किया जा सकता है। ऐसा करने से जहां केवल एक विधि से खरपतवार नियंत्रण पर निर्भरता कम होती है बल्कि खरपतवारों का प्रभावी ढंग से नियंत्रण भी होता है। उदाहरण के तौर पर गन्ने में बुवाई के बाद सूखी पत्तियों की मल्चिंग करने तथा उसके बाद फसल उगने पर किसी भी शाकनाशी को प्रयोग करने से खरपतवारों का नियंत्रण ज्यादा कारगर होता है तथा गन्ने की पैदावार भी बढ़ जाती है। एट्राजीन 1.0 किलोग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व प्रयोग करने तथा उसके बाद हाथ से एक बार निराई करने पर गन्ने की पैदावार में अधिक वृद्धि होती है। इसी प्रकार एट्राजीन 1.0 किलोग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से लाइनों के बीच (सीधे स्प्रे) करने से गन्ने की फसल को खरपतवारों से सम्पूर्ण छुटकारा मिल जाता है तथा पैदावार में भी बढ़ोत्तरी होती है।

तिलहनी फसलों में गंधक का महत्व एवं प्रयोग विधि

डॉ अजीत कुमार* डॉ संजय कुमार** एवं दिनेश कुमार***

गंधक तिलहन फसल के लिए एक महत्वपूर्ण तत्व है। चूँकि भूमि में इसकी आपूर्ति कम है। अतः इसकी कमी उत्पादन वर्ग, उपभोक्ता वैज्ञानिक तथा नियोजन वर्ग के लिये मुख्य चिन्ता का विषय बना हुआ है। गंधक दोहन तथा आपूर्ति के मध्य लगभग 0.5 मिलियन टन का अन्तर है, जो कि 2025 में पूरा 2 मिलियन टन होने की सम्भावना है। अतः नीतियों का इस प्रकार सुनियोजित करना चाहिए कि इस अन्तर को कम से कम किया जा सके तथा गंधक के उपयोग को बढ़ाने के लिए गन्धक युक्त उर्वरकों तथा जैविक खाद का न्यायिक संयोजन आवश्यक है।

एक अनुमान के अनुसार तिलहनी फसलों के पौधों को फास्फोरस के बराबर मात्रा में गंधक की आवश्यकता होती है। राज्य में बोई जाने वाली तिलहनी फसलों में मूंगफली, सरसो, अरण्डी, अलसी, तारामीरा इत्यादि प्रमुख है। एक ही खेत में हर वर्ष इन फसलों की खेती करने से खेती में गंधक की कमी हो रही है, जिससे फसल की पैदावार व गुणवत्ता में गंधक निरन्तर कमी आ रही है। राज्य में कृषि द्वारा इन फसलों प्रायः गंधक रहित उर्वरक जैसे डी.ए.पी. एवं यूरिया का उपयोग अधिक किया जा रहा है। जबकि गंधक युक्त उर्वरक, जैसे सिंगल सुपर फास्फेट व जिप्सम का उपयोग कम हो रहा है, जिससे खेतों में गंधक की आवश्यकता पड़ रही है।

गंधक की कमी के मुख्य कारण

- फसलों के द्वारा गंधक का भारी दोहन।
- अधिक उत्पादन के उद्देश्य से उगने वाली फसलों को भूमि पर उगाने से गंधक–मुक्त खाद की और झुकाव।
- गंधक दोहन तथा गंधक की भूमि में आपूर्ति के अन्तर का बढ़ना।
- उर्वरक तथा जैविक खाद का कम उपयोग।
- मुख्य तत्व नत्रजन फास्फोरस तथा पोटेशियम वाले खाद को अधिक महत्व।
- कुल गंधक की कमी, मोटे गॅठन, कुल जैविक खाद की कमी तथा गंधक का निक्षालन तथा अपरदन।
- नहरी जल से सिंचाई जिसमें गंधक की कमी पाई जाती है।
- गंधक–मुक्त कीट नाशकों का अधिक प्रयोग से नत्रजन, फास्फोरस, पोटेशियम, गन्धक का अनुपातः 8:4:2 से बहुत निम्न है।

गंधक का महत्व

गंधक कुछ महत्वपूर्ण एमिनों अम्लों, सिस्ओन, सिस्टाइन एवं मिथियोलीन जैसे गंधक एमीनों एसिड एवं इससे निर्मित प्रोटीन का अवयव है। सरसों तेल में झासपन, गंधक के कारण होता है। तेल के जैव उत्पादन, दलहनी फसलों में सुडौल दोनों के निर्माण में गन्धक सहायक है। गंधक सल्फैडरिल प्रोटीन–एच.एच. समूह बनाने में सहायक हैं। पादप की गर्मी तथा सर्दी प्रतिशोधक बनाने में सहायता करता है। तिलहन फसलों में विशेषतः सरसों में यह आइसोसाइनेट तथा सल्फो आक्साइड के निर्माण में मदद करता है, जिससे उत्पाद में विशेष गंधक कार्बोहाइड्रेट उपाचय को नियंत्रित करता इसी के साथ कुछ विटामिन जैसे थाइमिन तथा बायोटिन, लोहा–गंधक प्रोटीन फेरिडोक्सिन, गंधक ग्लाइकोसाइड तथा सह जैविक उर्वरक में गंधक महत्वपूर्ण घटक है। मानव आहार में प्रोटीन के महत्व को ध्यान में रखते हुए आवश्यक है कि अच्छी गुणवत्ता वाली तिलहनी फसलों का उत्पादन बढ़ाया जाय।

गंधक की कमी के लक्षण

- पौधों की पूर्ण रूप से सामान्य वृद्धि नहीं हो पाती है तथा जड़ों का विकास भी कम होता है।
- पौधों की ऊपरी पत्तियों (नयी पत्तियों) का रंग हल्का फीका व आकार में छोटा हो जाता है, पत्तियों का धारियों का रंग तो हरा होता है, परन्तु बीच का भाग पीला हो जाता है। पत्तियाँ कप के आकार की हो जाती है तथा पत्तियों की निचली सतह एवं तने लाल हो जाते हैं।
- पत्तियों की पीलापन की वजह से भोजन पूरा नहीं बन पाता और उत्पादन में कमी आने से तेल का प्रतिशत

*शस्य विज्ञान विभाग, ***मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग,
प्राविधिक सहायक, प्रसार अनुभाग, कृषि विभाग, उत्तर प्रदेश
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

कम हो जाता है।

- जड़ों की वृद्धि कम हो जाती है। तने विभाजित हो जाते हैं तथा कभी–कभी ये ज्यादा लम्बे हो जाते हैं।
- फसल को गुणवत्ता में भी कमी आ जाती है।

गंधक की कमी की पूर्ति कैसे करें

फसलों को संतुलित खुराक देने के लिए, सर्वप्रथम अपने खेत की मिट्टी की जांच अवश्य करायें। जिससे फसल को कितने मात्रा में पोषक तत्वों की आवश्यकता है तथा भूमि में इस पोषक तत्वों को कितने उपलब्धता है, का पता लग जायेगा।

गंधक की पूर्ति के लिए बुवाई से पूर्व मृदा में तथा खड़ी फसल में सिंचाई से पूर्व फसलानुसार मात्रा (सारिणी–1) का प्रयोग करें।

सारणी–1: विभिन्न फसलों में गंधक का प्रयोग

फसल	गंधक की मात्रा किलोग्राम प्रति हेक्टेयर
तिलहनी फसलों (मूँगफली, सरसों तारामीरा, अलसी) में	25–30
प्याज, लहसुन, आलू फसलों में	35–40
टमाटर व अन्य सब्जियों में	15–20
कपास व अन्य फसल में	10–15

गंधक खाद का जैविक खाद के साथ समन्वित उपयोग

जैविक रूप से आवद्ध गंधक पादप के लिए महत्वपूर्ण स्रोत है। अतः जैविक खाद का उपयोग करने से गंधक की अनुप्रयोग क्षमता बढ़ती है तथा अवशिष्ठ मात्रा भी मृदाओं में बढ़ती है। 20 किग्रा प्रति हेक्टेयर को 5 टन जैविक खाद के साथ उपयोग मौसम में उगने वाले गेहूँ को भी लाभान्वित किया जा सकता है। इसी प्रकार पाइराईट को 10 टन प्रति हेक्टेयर की दर से जैविक खाद के साथ उपयोग करने पर मूँगफली की उत्पादकता को पाइराईट के एकाकी उपयोग की अपेक्षा कई गुना बढ़ाया जा सकता है।

सारिणी–2 विभिन्न उत्पाद में पोषक तत्वों की मात्रा

उत्पाद	पोषक तत्व की सांद्रता (%)	प्रयोग विधि
सिंगल सुपर फास्फेट	फास्फोरस 16, सल्फर 12 एवं कैल्शियम 19.5%	बुवाई के पूर्व बेसल ड्रेसिंग के रूप में दें।
जिप्सम	23% कैल्शियम, 16% सल्फर	250 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर अन्तिम जुताई के समय या वर्षा से पूर्व फैलाकर 10 से 15 से.मी. गहराई तक मिट्टी में मिला दें।
जिंक सल्फेट	जिंक 21% एवं सल्फर 15%	25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बुवाई के समय खेत में मिलावें खड़ी फसल पर 0.05% का घोल का छिड़काव करें।
फेरस सल्फेट	लोहा 19% एवं सल्फर 12%	खड़ी फसल पर 0.05% फेरस सल्फेट का छिड़काव करें।
पोटैशियम सल्फेट	पोटाश 50% एवं सल्फर 18%	बुवाई के पूर्व बेसल ड्रेसिंग के रूप में दें।

जिप्सम गंधक का सर्वोत्तम व सस्ता स्रोत है तथा राज्य में आसानी से उपलब्ध है। जिप्सम में लगभग 13.5 प्रतिशत गंधक पाया जाता है। क्षारीय भूमि में ही जिप्सम डालें। जिप्सम का उपयोग न केवल उत्पादन एवं उत्पादन में वृद्धि करता है, बल्कि भूमि को क्षारीय होने से रोकता है एवं क्षारीय भूमि से सोडियम (क्षार) को हटाकर भूमि को ठीक भी करता है।

फसल अवशेष प्रबन्धन मृदा के लिए वरदान

रेनू आर्या*, सोनम आर्या**, आर.एल. आर्या*** एवं एस.के. वर्मा****

मृदा फसलोत्पादन के लिए एक भौतिक माध्यम है इसके सुदृणीकरण के लिए कई प्रयास किये जाते हैं जिससे मृदा का स्वास्थ्य बरकरार बना रहे। आधुनिक समय में फसल उत्पादन के लिए कृषक केवल रासायनिक उर्वरकों का ही प्रयोग करते हैं जिसके कारण मृदा में जैव कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में दिनो दिन कमी होती जा रही है। मृदा में जैव कार्बनिक पदार्थं फसलोत्पादन का आधार है यदि मृदा में जैव पदार्थ की मात्रा शून्य कर दी जाए और उर्वरकों की अधिकतम मात्रा का प्रयोग करने पर भी फसलोत्पादन करना सम्भव नहीं हो सकता है। वर्तमान समय में अधिकांश मृदाओं में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा 0.3 –0.5 प्रतिशत है जबकि अच्छी उर्वराशक्ति वाली मृदाओं में इसकी मात्रा 1.0 –1.2 प्रतिशत होनी चाहिए। खेती में यन्त्रीकरण हो जाने के कारण कृषकों ने पशु आधारित खेती को करना बन्द कर देने से मृदा में गोबर/ कम्पोस्ट की खाद का प्रयोग बहुत कम कर दिया है साथ ही साथ परम्परागत खेती में हरी खाद के प्रयोग का अहम स्थान था परन्तु आधुनिक युग में कृषक सघन फसलोत्पादन के कारण वर्ष में 3–4 फसलें उगाकर अधिक से अधिक लाभ कमाना चाहता है यदि वह अपने खेत में हरी खाद की फसल उगाकर प्रयोग करना चाहता है तो उसको एक फसल का नुकसान होता है जिसके कारण कृषक हरी खाद का प्रयोग करना ही नहीं चाहता है। परन्तु यह धारणा सही नहीं है क्योंकि यदि कृषक अपने खेत में हरी खाद का प्रयोग करता है तो मृदा में रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग की मात्रा को कम करने में सहायक है जिससे मृदा में विकार की समस्या से निजात मिल सकती है जिसके फलस्वरुप फसलों के उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव पडता है।

मृदा के समृद्धीकरण एवं उर्वराशक्ति बढाने में फसल अवशेषों का भी महत्वपूर्ण योगदान है। फसल उगाने में पौधे की सूखी पत्तियां, अपरिपक्व पुष्प तथा फलियां, डंठल, जड़े आदि मृदा में अवशेष के रुप में रह जाती हैं जो सड़ गल कर मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि करती हैं। दलहनी फसलें जैसे अरहर, चना, मसूर, लोबिया आदि फसलों में फसल की कटाई के पूर्व समस्त पत्तियां, अपरिपक्व पुष्प तथा फलियां आदि झड़कर मृदा में सड़ जाती हैं एवं दलहनी फसलों की जड़ो में जड़ ग्रन्थियां बहुत अधिक मात्रा में पाई जाती हैं जो वायुमंडल की नत्रजन का स्थिरीकरण करती है। इनकी बहुत अधिक मात्रा पौधे द्वारा ग्रहण कर ली जाती है शेष बची हुई मात्रा ग्रन्थियों में अवशेष रह जाने के कारण मृदा की उर्वरता में वृद्धि करती हैं। आधुनिक समय में श्रमिको की उपलब्ध्ता में कमी, सघन फसलोत्पादन के कारण अगली फसल की बुवाई के लिए, खेत तैयार करना, पशुओं को चारे की आवश्यकता न होना, यन्त्रीकरण आदि कारणों से मुख्यतः धान एवं गेहूं की फसलों की कटाई कम्बाइन एवं हारवेस्टर द्वारा कराने पर फसलों के तना एवं पत्तियां आदि खेत में ही छोड़ दिया जाता है।

इसी प्रकार गन्ना से निकली हुई सूखी एवं हरी पत्तियां भी खेत में छोड़ दी जाती हैं। जिसका कृषक किसी भी प्रकार से उपयोग नहीं कर पाने के कारण इनको जला

*वैज्ञानिक, कृषि विज्ञान केन्द्र, बहराइच (उ0प्र0)
**असिसटेंट प्रोफेसर, कालेज आफ एप्लाइड एजूकेशन एंड हेल्थ साइन्स, मेरठ
***जिला सलाहकार, कृषि विभाग, कानपुर देहात, ****वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र बहराइच, उत्तर प्रदेश

देते है। यदि इन फसल अवशेषों को जुताई करके खेत में मिला दिया जाए तो मृदा में न केवल कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि होगी बल्कि पर्यावरण में होने वाले प्रदूषण से भी मुक्ति मिल सकती है। इन फसल अवशेषों के जला देने से मृदा पर बहुत ही प्रतिकूल प्रभाव पडता है जिसके कारण उत्पादन में आशातीत वृद्धि नहीं हो पा रही है।

फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने से लाभ

कृषक यदि इन फसल अवशेषों को मृदा में मिला देते हैं तो निम्न लाभ प्राप्त होते हैं।

(1). एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन में फसल अवशेष प्रमुख एवं अहम योगदान प्रदान करतें हैं फसल अवशेष मृदा में मिलाये जाते हैं तव इनकी सड़ाव की प्रक्रिया होती है जिससे मृदा मे लाभदायक जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है। जिसके फलस्वरुप उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव पडता है।

(2). आज देश में बढ़ते वायु, जल एवं मृदा प्रदूषण की बहुत बड़ी समस्या है जिसके कारण मनुष्यों में कई प्रकार की बीमारियां हो रही हैं। यदि इन फसल अवशेषों को मृदा में मिला दिया जाए तो जो धुऐं द्वारा वायु प्रदूषण होता है उससे कुछ हद तक निजात पाई जा सकती है तथा वातावरण को विपरीत परिस्थितियों से बचाने में सहायक है।

(3). दलहनी फसलों के फसल अवशेषों को मृदा में मिला देने से नत्रजन एवं अन्य पोषक तत्वों की मात्रा बढाने में सहायक है।

(4). फसल अवशेष जैसे धान के पुआल को जुताई द्वारा जब मृदा में मिलाया जाता है तब मृदा में इसका सड़ाव होता है। सड़ाव की प्रक्रिया होने के पश्चात कार्बनिक अम्ल का निर्माण होता है। यह कार्बनिक अम्ल अम्लीय होता है जबकि उसरीली अथवा क्षारीय भूमियां नमकीन या क्षारीय होती हैं। उसरीली अथवा क्षारीय भूमियों में धान का पुआल को मृदा में मिलाने ये मृदा का पी एच मान कम हो जाने से मृदा उदासीन होकर अच्छी एवं उपजाऊ मृदा के रुप में परिवर्तित हो जाती है।

(5). फसल अवशेषो को मृदा में मिलाने अथवा दबाने के पश्चात कार्बनिक अम्ल का निर्माण होता है। विशेषकर समस्याग्रस्त मृदाओं में उपस्थित पोषक तत्व अप्राप्य अवस्था में रहते हैं। यह कार्बनिक पदार्थ मृदा में अप्राप्य पोषक तत्वों को प्राप्य अवस्था में परिवर्तित कर देते हैं जिनका पौधों द्वारा आसानी से ग्रहण कर लिया जाता है जिसके परिणामस्वरुप मृदा की उत्पादकता में वृद्धि होकर अधिक उपज प्राप्त होती है।

(6). हरी खाद अथवा फसल अवशेषों का मृदा में प्रयोग करने से मृदा में लाभदायक जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है। इन लाभदायक जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होने से बीमारियां फैलाने वाले जीवाणुओं की संख्या में कमी हो जाती है। अतः फसल में लगने वाली विभिन्न बीमारियों का काफी हद तक नियंत्रण किया जा सकता है।

(7). विशेषकर मटियार अथवा भारी मृदाओं की संरचना बहुत महीन होती है जिससे मृदा में वायुसंचार कम होने से लाभदायक जीवाणुओं की क्रियाशीलता प्रभावित होती है। जब फसल अवशेषों को मृदा में मिलाया जाता है तो मृदा सरन्ध्र तथा पोली हों जाती है जिससे मृदा में वायुसंचार में वृद्वि हो जाने से जीवाणुओं की सक्रियता में बृद्धि होने से फसलों के उत्पादन में वृद्वि हो जाती है।

(8). सघन फसलोत्पादन के कारण फसल अवशेषो को मृदा में न मिलाने से जीवांश पदार्थ की मात्रा में निरन्तर कमी होती जाती है जिसके फलस्वरुप फसल उत्पादन में वृद्धि नहीं हो पा रही है। इन फसल अवशेषों को मृदा में मिला देने से जीवांश में हो रही लगातार ह्रास को कम करने में योगदान करता है।

(9). फसल अवशेषों का प्रयोग पलवार के रुप में करने से असिंचित क्षेत्रों में जहां पर जल की कमी होती है वहां पर मृदा नमी का संरक्षण होने से फसलों की बृद्धि एवं बढ़वार अच्छी हो जाती है जिसके फलस्वरुप फसलोत्पादन में वृद्धि हो जाती है। इसके अतिरिक्त फसलों की पंक्तियों के मध्य में इन फसल अवशेषों का प्रयोग करने से जिन क्षेत्रों में मृदा कटाव की समस्या होती है वहां पर जल अपवाह में रुकावट होने से मृदा एवं जल संरक्षण अधिक मात्रा में किया जा सकता है। फसल अवशेषो को मृदा में मिलाने मृदा कटाव भी काफी हद तक कम करने में भी सहायक है।

(10).फसल अवशेषों का प्रयोग कम्पोस्ट बनाने बहुत ही सहायक है। नाडेप विधि द्वारा इन फसल अवशेषों का प्रयोग करके अच्छी गुणवत्तायुक्त कम्पोस्ट बनाई जा सकती है। कृषक इस नाडेप कम्पोस्ट का प्रयोग करने पर मृदा की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक संरचना में सुधार किया जा सकता है। जिसके फलस्वरुप मृदा की उर्वराशक्ति में वृद्धि करके फसलोत्पादन में आशातीत वृद्धि की जा सकती है।

(11).फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने से मृदा की भौतिक संरचना में सुधार हो जाने से मृदा की जलशोषण तथा जल धारण क्षमता में वृद्धि हो जाती है। मृदा की जलधारण क्षमता में बृद्धि हो जाने से प्रतिकूल परिस्थितियो में भी पौधों को मृदा जल की उपलब्धता होने से फसलों से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। मृदा की सरन्ध्रता में वृद्धि हो जाने से फसल की जड़े गहराई तक चली जाती हैं जिससे मृदा की गहराई से पोषक तत्वों तथा मृदा जल का अवशोषण करनें में सक्षम हो जाती हैं।

फसल अवशेषों के जलाने से हानियां

जहां पर फसलो की कटाई के लिये कम्बाइन का प्रयोग किया जाता है वहां पर फसलों के अवशेष डंठल के रुप में खड़े रह जाते हैं जिनको कृषक आग लगाकर जला देते हैं। इन फसल अवशेषों को जलाने से कई प्रकार की हानियां हैं जो निम्न हैं।

(1). फसल अवशेषों को जलाने से मृदा ताप में बढ़ोत्तरी हो जाती है जिसके कारण मृदा के भौतिक, रासायनिक तथा जैविक दशा पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है।

(2). फसल अवशेषों जैसे भूसा अथवा डंठलों को जलाने पर नजदीक के कृषकों की फसलों में आग लगने की सम्भावना बनी रहती है जिससे खड़ी फसल एवं आबादी में भी अग्निकांड होने की संभावना बनी रहती है, वहीं आस–पास के खेत तथा खलिहान एवं भवनो में भी आग लगने के कारण अत्यधिक नुकसान उठाना पडता है।

(3). गेहूं का भूसा, धान का पुआल, गन्ने की सूखी एवं हरी पत्तियां आादि को जला देने से पशुओं के लिए चारे की व्यवस्था पर भी बुरा प्रभाव पडता है।

(4). चूंकि मृदा को एक जीवित माध्यम माना जाता है। एक ग्राम मृदा में असंख्य जीवाणुओं का वास है। मृदा में इन सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा पोषक तत्वों का रुपान्तरण, फसल अवशेषों को जला देने से मृदा में उपस्थित लाभदायक मित्र कीट मर जाते हैं।

जिससे मृदा बंजर हो जाती है तथा फसलोत्पादन के लिए अयोग्य हो जाती है।

(5). फसलों के अवशेषों जैसे तना, पत्तियों आादि में पोषक तत्वों की काफी अधिक मात्रा में पाई जाती हैं। फसलों के अवशेषों को जलाने से उनके जड, तना, पत्तियों में संचित पोषक तत्व भी नश्ट हो जाते हैं।

उपरोक्त फसल अवशेषों से लाभ एवं हानियों को दृष्टिगत रखते हुए किसी भी प्रकार के फसल अवशेषों को जलाए नहीं बल्कि मृदा में कार्बनिक पदार्थो (जैव पदार्थो) की वृद्धि हेतु पादप अवशेषों को मृदा में मिलायें / दबायें / सड़ायें। कृषक भाई यदि फसलों की कटाई में कम्बाइन का प्रयोग करते हैं तो रीपरयुक्त कम्बाइन का प्रयोग करें जिससे भूसा बनें और पशुओं को गुणवत्तायुक्त भरपूर चारा मिल सके। इसके अतिरिक्त पैडी स्ट्रा चोपर, हैपी सीडर, सुपर एस0एम0एस0 जीरो टिल सीडड्रिल, रोटरी स्लेसर, मल्चर, श्रेडर, रिवरसिबल एम.वी. प्लाउ आदि कृषि यंत्रों का प्रयोग किया जा सकता है। जिन पर राज्य सरकार 50 प्रतिशत का अनुदान भी दे रही है।

मा0 राष्ट्रीय हरित प्राधिकरण, नई दिल्ली द्वारा फसल अवशेषों को जलाये जाने पर निम्नलिखित दण्ड घोषित किया गया हैः—

(1). कृषि भूमि का क्षेत्र 02 एकड़ से कम होने की दशा में फसल अवशेषों को जलाने पर प्रति घटना कृशक पर 2500.00 आर्थिक दण्ड घोषित किया गया है।

(2). कृषि भूमि का क्षेत्र 02 एकड़ से अधिक परन्तु 05 एकड से कम होने की दशा में फसल अवशेषों को जलाने पर प्रति घटना कृषक पर 5000.00 आर्थिक दण्ड घोषित किया गया है।

(3). कृषि भूमि का क्षेत्र 05 एकड़ से अधिक होने की दशा में फसल अवशेषों को जलाने पर प्रति घटना कृषक पर 15000.00 आर्थिक दण्ड घोषित किया गया है।

(4). खेतों में अवशेष जलाने की लगातार दो घटनाऐं होने की दशा में सम्बन्धित कृषक को सरकार द्वारा दिये जाने वाले अनुदान आदि से वंचित कर दिये जाने के निर्देश मा0 राष्ट्रीय हरित प्राधिकरण, नईदिल्ली द्वारा दिये गये हैं।

(5). फसलों की कटाई में कम्बाइन हार्वेस्टिग बिद वाइन्डर अथवा स्ट्रारीपर का प्रयोग अनिवार्य कर दिया है। बिना रीपर मशीन के कम्बाइन मशीन प्रयोग करने वाले मालिकों के विरूद्ध सिविल दायित्व भी निर्धारित कियें जायेंगे।

फसलों की कटाई के पश्चात जड़, तना, पत्तियों आदि के रूप मे पादप अवशेष भूमि के अन्दर एवं भूमि के ऊपर उपलब्ध होते हैं। इनको यदि 20 कि0ग्रा0 यूरिया प्रति एकड़ की दर से छिड़क कर मिट्‌टी पलटने वाले हल से अथवा रोटावेटर से जुताई करके मिला देने से यह पादप अवशेष लगभग 20—30 दिन के अन्दर जमीन में सड़ जाते हैं जिससे मृदा में कार्बनिक पदार्थों एवं अन्य तत्वों की बढोत्तरी हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप फसल उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव पडता है।

इन फसल अवशेषों को मृदा में पलटने के लिए उपरोक्त कृषि यन्त्रों का प्रयोग किसान भाई कर सकते हैं जिन पर केन्द्र तथा राज्य सरकार द्वारा अनुदान भी घोषित किया गया है। इन कृषि यन्त्रों को खरीद कर फसल अवशेषों का उचित संरक्षण करके मृदा में होने वाली हानि से बचा जा सकता है तथा फसलोत्पादन में वृद्धि की जा सकती है।

मोटे अनाजों का पौष्टिक महत्व एवं उपयोगिता

सरिता श्रीवास्तव* एवं संतोश कुमार चतुर्वेदी**

अनाज हमारे भोजन का आधार है, बिना अनाज के हम भोजन की कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। अनाजों में मुख्य रूप से कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है, जो हमारे शरीर को ऊर्जा प्रदान करता है। एक स्वस्थ पुरूष को प्रतिदिन शारीरिक परिश्रम के अनुसार 400 से 650 ग्राम अनाज तथा महिलाओं को 300 से 475 ग्राम अनाज खाना चाहिए। आज के परिवेश में हम अनाजों के रूप में मुख्यतः गेहूँ व चावल का ही सेवन करते है। जबकि प्रकृति ने हमें इनसे भी अधिक पौष्टिक अनाज दिये हैं, जिन्हें हम मोटे अनाजों के रूप में जानते हैं। इन मोटे अनाजों में सूक्ष्म पोषक तत्व, रेशा तथा प्रोटीन, गेहूँ चावल की अपेक्षा अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। हमें कुपोषण से छुटकारा दिलाने में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है। हम इन्हें मोटे अनाज इसलिए कहते है। क्योंकि इनमें खाद्य रेशों की मात्रा गेहूँ चावल की अपेक्षा अधिक होती है, जो हमें पाचन सम्बन्धी कई बिमारियों जैसे कब्ज, गैस, एसिडीटी आदि से बचाता है। ये मोटे अनाज मक्का, बाजरा, जौ, सॉवा, कोदों, जई, मडुँआ आदि हैं। आज बाजार में इन्हें खाने योग्य बनाकर बेचा जा रहा हैं। इन अनाजों से कई खाद्य उत्पाद जैसे दलिया, आटा, पोहा, भूजा, सत्तु आदि भी तैयार किये जा रहे हैं। जिनकी सहायता से हम अनेकों पौष्टिक व स्वादिष्ट व्यंजन बनाकर अपने आहार में ले कर पौष्टिकता के साथ–साथ अनेकों बीमारियों से भी छुटकारा भी प्राप्त कर सकते हैं। इन मोटे अनाजों का पौष्टिक विवरण इस प्रकार है।

1. मक्का

पूर्वांचल में गेहूँ चावल के बाद भोजन में मक्के का प्रयोग सबसे अधिक होता है। पूरे उत्तर प्रदेश में मक्के की खेती की जाती है। इसमें 11 प्रतिशत प्रोटीन 66 प्रतिशत कार्बोहाड्रेट व विटामिन 'बी' अच्छी मात्रा पायी जाती है। हरे मक्के का प्रयोग हम सीधे भूनकर खाने में भी करते हैं। मक्के का आटा पीसकर उसकी रोटी बनती है इसके सत्तू से कई स्वादिष्ट व्यंजन भी बनाये जाते हैं। इससे शिशुओं के लिए पौष्टिक पूरक आहार भी बनता है।

2. जई

जई एक पौष्टिक अनाज है। इसमें लगभग 12 से 18 प्रतिशत प्रोटीन पायी जाती है, जो बहुत पौष्टिक होती है। इसकी तुलना हम जन्तु प्रोटीन से कर सकते हैं। इसका प्रयोग मुख्य रूप से दलिया के रूप में सुबह नास्ते में किया जाता है।

3. जौ

जौ में 11.5 प्रतिशत प्रोटीन तथा विटामिन बी काम्पलेक्स पाया जाता है। इसकी बाहरी पर्त में अच्छी मात्रा में रेशा पाया जाता है। इसका प्रयोग मुख्य रूप से गेहूँ के साथ मिलाकर आटा बनाने में किया जाता है। ये आटा मधुमेह के रोगियों के लिए बहुत उपयोगी होता है। जौ को सत्तु के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। जौ को ऊबाल कर इसका पानी रोगियों को दिया जाता है, जो पौष्टिक होता है।

4. बाजरा

बाजरा पश्चिमी उत्तर प्रदेश व राजस्थान में अधिक खाया जाता है। इसमें 11.6 प्रतिशत प्रोटीन, 67.5 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है। इसमें फास्फोरस की अच्छी मात्रा पायी जाती है। 100 ग्राम बाजरा में 296 मिली ग्राम फास्फोरस पाया जाता है। बाजरे का प्रयोग विभिन्न रूपों में किया जाता है। खड़े बाजरे की खिचड़ी अत्यन्त स्वादिष्ट होती है। इसे भूनकर इसके लड्डू भी बनाये जाते है, इसका भूजा भी खाया जाता है। इसके भूजे की खीर बनती है। भोजन में सर्वाधिक रूप से इसका प्रयोग आटे के रूप में किया जाता है।

5. रागी / मडुआ

मडुआ की खेती गुख्य रूप से दक्षिण भारत में की जाती है। उत्तर प्रदेश के कुछ क्षेत्रों में भी इसमी खेती की जाती है। इसमें प्रोटीन की मात्रा अन्य मोटे अनाजों की अपेक्षा कम होती है। इसमें 3.6 प्रतिशत रेशा, 72 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है। साथ ही इसमें 2.7 प्रतिशत खनिज लवण पाये जाते हैं। प्रति 100 ग्राम मडुआ में 344 मिली ग्राम कैल्सियम 283 मिलीग्राम फास्फोरस व 6.4 मिली ग्राम लौह लवण पाया जाता है, इसीलिए ये अनाज बच्चों के पूरक आहार बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है। इसमें आटा पीसकर रोटी, पराठा आदि व्यंजन बनाये

*प्रभारी अधिकारी, **तकनीकी सहायक मत्स्य, कृषि ज्ञान केन्द्र, देवरिया

जाते हैं। इसको उबालकर खिचड़ी दलिया आदि भी बनाया जाता है। जो पौष्टिक, सुपाच्य व स्वादिष्ट होती है।

6. सॉवा

ये बहुत अधिक पौष्टिक मोटा अनाज है इसमें 6.2 प्रतिशत, प्रोटीन 9.8 प्रतिशत, रेशा, 65.05 कार्बोहाइड्रेट तथा 4.4 प्रतिशत खनिज लवण पाया जाता है। इसके प्रति 100 ग्राम से 307 किलो कैलोरी ऊर्जा, 20 मिली ग्राम कैल्सियम, 280 मिली ग्राम फास्फोरस व खीर बहुत स्वादिष्ट होता है।

मोटे अनाजों का भोजन में उपयोग

स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन का विकास होता है। मोटे अनाज हमें स्वस्थ रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनको हम निम्न रूपों से प्रयोग कर सकते हैं।

1. साबुत अनाजों के रूप में

सूखे हुए साबुत अनाजों जैसे मक्का, ज्वार, बाजरा, सॉवा कोदो आदि को भूनकर उनका भूजा तैयार किया जाता है। इसका लड्डु भी तैयार किया जाता है।

आटा

इन सभी मोटे अनाजों के सूखे हुये दानों को पीसकर आटा बनाया जाता है। इस आटे का प्रयोग प्रायः गेहूँ के आटे के साथ मिलाकर किया जाता है। आज बाजार में कई ब्राण्ड नाम से 'मिक्स ग्रेन आटा' (मिश्रित अनाजों) बिक्री हेतु उपलब्ध है। हम आटे को घर पर तैयार करके उससे रोटी, पूरी, कचौड़ी आदि व्यंजन बना सकते हैं। इस आटे को मैदा के साथ मिलाकर उससे शकरपारे, नमकपारे तथा मैदा से बनने वाले अन्य व्यंजन बनाये जा सकते हैं। इसे बेसन के साथ भी मिलाकर उसका नमकीन व पकौड़ी आदि बनाये जा सकते हैं। मिश्रित अनाजों के आटे को मिलाने से व्यंजन की पौष्टिकता बढ़ जाती है।

सत्तू

सत्तू सूखे हुए मोटे अनाजों को अच्छी तरह भुनकर उसे पीस लिया जाता है। इन पिसे अनाज को चलनी से चालकर सत्तू तैयार किया जाता है। सत्तू को चीनी या नमक मसाला मिलाकर किसी प्रकार से खा सकते हैं।

दलिया

मोटे अनाजों से दलिया बनाने के लिए उन्हें मिगोकर उनकी बाहरी कड़ी पर्त को निकालकर, सुखाकर दलिया के समान पीस लिया जाता है। यदि भिगोने से छिलका न निकले तो, अनाज को उबालकर उसमी कड़ी पर्त को निकालकर तब सुखाकर पीसा जाता है। मुख्य रूप से हम मक्का व जई का दलिया भोजन में प्रयोम करते है।

सूजी

गेहूँ के अतिरिक्त मक्के की भी सूजी बनाई जाती है। सूजी बनाने के लिए मक्के को मोटा ही पीसा जाता है, फिर चलनी से चालकर सूजी अलग कर ली जाती है। सूजी से कई व्यंजन तैयार किये जा सकते है।

पोहे

पोहे या फ्लैक्स विशेष रूप से बनाये जाते हैं। इसके लिए मक्के को उबालकर मुलायम कर ले इन उबले दानों को किसी भारी चीज से दबाकर चपटा कर अच्छी तरह से सुखा लें। इसी प्रकार अन्य अनाजों से भी पोहे बनाये जा सकते हैं। मक्के में पोहे कार्न फ्लैक्स के रूप में बाजार में उपलब्ध है इनका प्रयोग दूध के साथ मिलाकर नाश्ते के रूप में किया जाता है। इसको तल कर नमकीन भी बनायी जाती है।

मोटे अनाजों का शिशुपूरक आहार

सामग्री

मोटा अनाज (मक्का / रागी / बाजरा आदि)	150 ग्राम
मूँग की धुली दाल	75 ग्राम
मूँगफली	20 ग्राम
सफेद तिल	20 ग्राम

विधि

मूँग की दाल को चार घण्टे के लिए भिगों दें, फिर उसे अच्छी तरह सुखा ले, सूखी हुई मूंग दाल, मोटा अनाज (जो आपने लिया हो) तिल तथा मूंगफली को अलग–अलग ध्यानपूर्वक तब तक भूने जब तक उनसे भुनने की सुगन्ध न आ जाये। भुनी हुई सभी सामग्रियों को अलग–अलग बारीक पीसकर मिला दें तथा किसी डिब्बे में भरकर इस प्रकार सुरक्षित रखे कि डिब्बे में हवा प्रवेश न करने पाये। जब शिशु को भोजन देना हो तो इस मिश्रण को आवश्यकतानुसार मात्रा दूध या गुनगुने पानी में चीनी मिलाकर खिलायें।

वर्तमान समय में मोटे अनाजों की खेती का क्षेत्रफल लगातार घटता जा रहा है, जिससे इनका उत्पादन घटने के साथ इनका मूल्य भी निरंतर बढ़ता जा रहा है। सामान्यजन तक इनकी उपलब्धता कम हो गई है। ये सभी अनाज बहुत पौष्टिक है। भोजन में इनका प्रयोग अत्यन्त आवश्यक है।

श्वेत बटन मशरूम की खेती

डॉ प्रदीप कुमार* एवं डॉ वी.पी. चौधरी**

भारत में बटन, ढ़िगरी, दूधिया तथा पुआल मशरूम की खेती विभिन्न भागों में की जाती है। कुल मशरूम उत्पादन का 85% भाग बटन मशरूम (एगेरिकस बाइसपोरस) का है। इस खुम्ब के उत्पादन के लिए कवक जाल फैलाव के दौरान 22–25 डिग्री सेल्सियस तथा खुम्ब कलिकायें बनने के समय 14–18 डिग्री सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है तथा 80–85 प्रतिशत नमी की जरूरत पड़ती है शरद ऋतु के आरम्भ व अन्त में इस तापमान व नमी को आसानी से बनाये रखा जा सकता है। अन्य फसलों के विपरीत खुम्ब को कमरों या झोपड़ियों में उगाया जाता है।

खाद (कम्पोस्ट) तैयार करना

श्वेत बटन मशरूम को कृत्रिम ढंग से तैयार की गई खाद (कम्पोस्ट) पर उगाया जा रहा है। श्वेत बटन खुम्ब उगाने के लिए खाद (कम्पोस्ट) तीन विधियों से तैयार की जाती है:

(1). छोटी विधि (2). लम्बी विधि (3). इंडोर विधि

छोटी और इंडोर विधि से खाद तैयार करने में समय कम लगता है लेकिन अधिक पूंजी व संसाधनों की आवश्यकता होती है। तथा यह विधि लघु स्तर पर खुम्ब उत्पादन की दृष्टि से उपयुक्त नहीं है लघु स्तर पर खुम्ब उत्पादन करने के लिए लम्बी विधि से खाद तैयार करना उचित माना जाता है अतः यहॉ पर लम्बी विधि से कम्पोस्ट तैयार करने की विधि का विवरण दिया जा रहा है :

(1). लम्बी विधि से खाद (कम्पोस्ट) तैयार करना

खाद में प्रयुक्त सामग्री व उसकी मात्रा निम्नलिखित है:

सामग्री		**मात्रा**
1. गेहूँ का भूसा	–	300 किलोग्राम
2. कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट (कैन) खाद	–	9 किलोग्राम
3.यूरिया	–	4.5 किलोग्राम
4. म्यूरेट ऑफ पोटाश खाद	–	3 किलोग्राम
5. सुपर फास्फेट खाद	–	3 किलोग्राम
6. चोकर (गेहूँ का)	–	25 किलोग्राम
7.जिप्सम	–	25 किलोग्राम

विधि

ऊपर लिखे प्रयुक्त सामाग्री को नीचे दिये गये चरणों में कम्पोस्ट तैयार करें ।

(1). मिश्रण तैयार करना

भूसे या भूसे तथा पुआल के मिश्रण को पक्के फर्श पर 2 दिन (48 धण्टों) तक रूक रूक कर पानी का छिड़काव करके गीला किया जाता है भूसे को गीला करते समय पहले जिप्सम व बी.एच.सी. धूल को छोडकर अन्य सभी सामग्री जैसे उर्वरको व चोकर को एक साथ मिलाकर गीला कर लेते है तथा ऊपर से गीली बोरी से ढक देते हैं।

(2). ढेर बनाना

गीले किये गये मिश्रण (भूसे व उर्वरक आदि) को मिलाकर 4 फुट चौड़ा व 4 फुट ऊँचा ढेर बनाते है। ढेर की लम्बाई सामग्री की मात्रा पर निर्भर करती है लेकिन ऊंचाई व चौड़ाई ऊपर लिखे माप से अधिक व कम नहीं होनी चाहिए। यह ढेर पॉच दिन तक (ढेर बनाने के दिन के अतिरिक्त) ज्यों का त्यों लगा रहता है। बाहरी परतों में नमी कम होने पर आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव किया जा सकता है।

---

*सहायक प्राध्यापक, पादप रोग विज्ञान, कृषि ज्ञान केन्द्र गाजीपुर, **सहायक प्राध्यापक पादप रोग विज्ञान, प्रसार निदेशालय आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

(3). पलटाई क्रम

(क) पहली पलटाई (6वां दिन)

छठवें दिन ढेर की पहली पलटाई की जाती है पलटाई ढेर के प्रत्येक हिस्से की उलट पलट कर अच्छी तरह होनी चाहिए। ताकि प्रत्येक हिस्से को सड़ने व गलने के लिये पर्याप्त वायु व नमी प्राप्त हो जाये। ढेर बनाते समय यदि खाद में नमी कम हो तो आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव कर लेते हैं। नये ढेर का आकार व नाप पहले ढेर की भांति ही होता है। आगे की पलटाईयॉ भी पहली पलटाई की भांति की जाती हैं।

(ख) दूसरी पलटाई (10वाँ दिन)

(ग) तीसरी पलटाई (13वाँ दिन) इस पलटाई के समय जिप्सम भी मिलायें।

(घ) चौथी पलटाई (16वाँ दिन)

(ड.) पाँचवी पलटाई (19वाँ दिन)

(च) छठवीं पलटाई (22वाँ दिन)

(छ) सातवीं पलटाई (25वाँ दिन): इस पलटाई के समय नुवान या मैलाथियान (0.1%) का छिड़काव करें।

(ज) आठवीं पलटाई (28वाँ दिन)

अटठाइसवें दिन खाद (कम्पोस्ट) में अमोनिया व नमी का परीक्षण किया जाता है। नमी का स्तर जानने के लिये खाद को मुट्ठी में दबाते है यदि दबाने पर हथेली व उंगलियां गीली हो जायें परन्तु खाद से पानी निचुड़कर न बहे तो इस अवस्था में खाद में नमी का स्तर उचित होता है तथा ऐसी दशा में कम्पोस्ट में 68–70 प्रतिशत नमी मौजूद होती है।

अमोनिया का परीक्षण करने के लिए खाद को सूँघा जाता है। सूँघने पर यदि अमोनिया की गंध (गौशाला में पशु मूत्र जैसी गंध) आती है तो 3 दिन के अंतर से एक या दो पलटाई और करनी चाहिए। जब अमोनिया की गंध बिल्कुल समाप्त हो जाये तब खाद को 25 डिग्री सेल्सियस तापमान तक ठण्डा होने दें, तत्पश्चात बीजाई करके थैलों में भर दें।

(4). बीजाई (स्पानिंग) करना

उपरोक्त विधि से तैयार खाद में बीज मिलाया जाता है। बीज देखने में श्वेत व रेशमी कवक जालयुक्त हो जिसमें किसी भी प्रकार की आवांछित गंध न हो । बीजाई करने से पहले बीजाई स्थान एवं बीजाई में प्रयुक्त किये जाने वाले बर्तनों को 2 प्रतिशत फार्मेलीन घोल में धोयें व बीजाई का कार्य करने वाले व्यक्ति अपने हाथों को साबुन से धोयें ताकि खाद में किसी प्रकार के संक्रमण से बचा जा सकें। इसके पश्चात 0.5 से 0.75 प्रतिशत की दर से बीज मिलाये यानि कि 100 किग्रा तैयार कम्पोस्ट के लिये 500–750 ग्राम बीज पर्याप्त है।

(5). बीजित खाद को पॉलीथीन के थैलों में भरना व कमरों में रखना

किसी हवादार कमरे में लोहे या बांस या अन्य प्रकार की मजबूत लकड़ी की सहायता से लगभग दो दो फुट की दूरी पर कमरे की ऊचाई की दिशा में एक के ऊपर एक मचान बना लें यह कार्य बीजाई करने से पहले कर लेना चाहिए। खाद भरे थैले रखने से 2 दिन पहले इस कमरे के फर्श को 2 प्रतिशत फार्मेलीन घोल से धोयें तथा दीवारों व छत पर घोल का छिड़काव करें। इसके तुंरत बाद कमरे के दरवाजे तथा खिड़कियाँ इस तरह बंद करें कि अंदर की हवा बाहर न आ सके।

अब बीजाई करने के साथ साथ 10–12 किलोग्राम बीजित खाद को पॉलीथीन के थैलों में भरते जायें तथा थैलों का मुंह कागज की थैली के समान पॉलीथीन मोड़कर बंद कर दें। यहॉ यह ध्यान रखें की थैले में खाद 1 फिट से ज्यादा न हो। इसके पश्चात इन थैलों को कमरे में बने बांस के टाड पर एक दूसरे से सटाकर रख दें। कमरे मे 22–25 डिग्री सेल्सियस तापमान व 80–85 प्रतिशत की नमी बनाये रखें। तापमान को बिजली चालित उपकरणों जैसे कूलर, हीटर आदि का प्रयोग करके नियंत्रित किया जा सकता है। नमी कम होने पर कमरे की दीवार पर पानी का छिड़काव करके एवं फर्श पर पानी भरकर नमी को बढ़ाया जा सकता है।

(6). केसिंग मिश्रण तैयार करना व केसिंग परत चढ़ाना

बीजाई के लगभग 15 दिन बाद कवक जाल (बीज के तन्तु) खाद में फैल जाता है और खाद का रंग गहरे भूरे से बदलकर फफूँद जैसा सफेद हो जाता है इस अवस्था में खाद को केसिंग मिश्रण की परत से ढकना पड़ता है। केसिंग मिश्रण एक प्रकार की मिटटी है जिसे दो साल पुरानी गोबर की खाद व दोमट मिटटी (बराबर हिस्सों में) को मिलाकर तैयार किया जाता है लेकिन इस केसिंग मिश्रण को खाद चढ़ाने से पहले रोगाणु मुक्त करने के लिये 2 प्रतिशत फार्मेलीन के घोल से उपचारित करते हैं फार्मेलीन नामक रसायन का 2 प्रतिशत घोल तैयार करने के लिये 1 लीटर फार्मेलीन (40 प्रतिशत सक्रिय तत्व) को 20 लीटर पानी में घोला जाता है। इस घोल से केसिंग मिश्रण को गीला किया जाता है घोल की मात्रा केसिंग मिश्रण की मात्रा पर निर्भर करती है तत्पश्चात इस मिश्रण को पॉलीथीन से चारों तरफ से ढक देते है और इस पॉलीथीन को केसिंग प्रक्रिया शुरू करने के 24 घण्टे पूर्व हटाते है। पॉलीथीन उतारने के बाद केसिंग मिश्रण को साफ बेलचे से उलट पलट देते है केसिंग तैयार करने का कार्य केसिंग प्रक्रिया शुरू करने के लगभग 15 दिन पहले समाप्त कर देना चाहिए।

कवक जाल फैले थैलों का मुंह खोलकर खाद की सतह को हल्का–हल्का दबाकर चौरस कर लेते है तथा केसिंग मिश्रण की 3–4 से.मी. मोटी चौरस परत चढ़ा दी जाती है व थैले के अतिरिक्त पॉलीथीन को नीचे की ओर मोड़ देते हैं तथा पहले की भांति थैलों को कमरे में रख देते हैं इस दौरान भी कमरे में 22–25 डिग्री सेल्सियस तापमान तथा 80–85 प्रतिशत नमी बनाये रखें।

(7). केसिंग के उपरान्त रख रखाव

केसिंग प्रक्रिया पूर्ण करने के पश्चात अधिक देखभाल करनी पड़ती है प्रतिदिन थैलों में नमी का जायजा लेना चाहिये तथा आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव करना चाहिए केसिंग करने लगभग एक सप्ताह बाद जब कवक जाल केसिंग परत में फैल जाये तब कमरे के तापमान को 22–25 डिग्री सेल्सियस से घटाकर 14–18 डिग्री सेल्सियस पर ले आना चाहिए तथा तापमान को पूरे फसल उत्पादन काल तक बनाये रखना चाहिए। इस तापमान पर छोटी छोटी खुम्ब कलिकायें बनना शुरू हो जाती है जो शीघ्र ही परिपक्व खुम्ब में बदल जाती है इस चरण में नमी की अधिक आवश्यकता होती है अतः पहले से कुछ अधिक (85–90 प्रतिशत) नमी बनाये रखना चाहिए। सुबह व शाम थैलों पर पानी का छिड़काव करना चाहिए तापमान व नमी के अतिरिक्त खुम्ब उत्पादन के लिये हवा का आदान प्रदान उत्तम होना चाहिए। इसके लिये आवश्यक है कि उत्पादन कक्ष में रोशनदान, खिड़की व दरवाजे द्वारा आसानी से हवा अंदर आ सके एवं अंदर की हवा बाहर जा सके। सुबह शाम कुछ देर के लिये दरवाजे व खिड़कियां खोल देना चाहिए।

(8). खुम्बो की तोड़ाई

खुम्ब कलिकायें बनने के लगभग 2–4 दिन बाद जब इन खुम्बों की टोपी का आकार 3–4 सेमी हो तथा टोपी बंद हो (छत्रक न बना हो) तब इन्हे मरोड़ कर तोड़ लेना चाहिए। सामान्य तापमान पर मशरूम को तोड़ने के बाद 12 घंटो तक सही अवस्था में रखा जा सकता है 2–3 दिन तक फ्रिज में रख सकते है इस प्रकार प्रतिदिन खुम्ब की पैदावार मिलती रहती है तथा 8–10 सप्ताह में पूरा उत्पादन मिल जाता है

(9). उपज व आमदनी

एक कुन्तल तैयार कम्पोस्ट से लगभग 15–18 किग्रा. मशरूम की उपज प्राप्त हो जाती है। एक किग्रा. मशरूम उत्पादन में 30–35 रू. का खर्च आता हे। जो बाजार में 100–125 रू. प्रति किग्रा. की दर से बिकता है।

ब्रोकली की खेतीः अधिक आय का श्रोत

समीक्षा वर्मा*, सुरेंद्र कुमार वर्मा, डॉ शैलेश कुमार सिंह*****

ब्रोकोली की खेती ठीक गोभी वर्गीय सब्जियों की तरह की जाती है। इसके बीज व पौधे देखने में लगभग फूल गोभी की तरह ही होते हैं। ब्रोकोली का खाने वाला भाग छोटी छोटी बहुत सारी हरे फूल कलिकाओं का गुच्छा होता है, जो फूल खिलने से पहले पौधों से काट लिया जाता है और यह खाने के काम आता है। फूल गोभी में जहां एक पौधे से एक फूल मिलता है वहां ब्रोकोली के पौधे से एक मुख्य गुच्छा काटने के बाद भी, पौधे से कुछ शाखायें निकलती हैं तथा इन शाखाओं से बाद में ब्रोकोली के छोटे गुच्छे बेचने अथवा खाने के लिये प्राप्त हो जाते है।ब्रोकली फूल गोभी की तरह ही होती है लेकिन इसका रंग हरा होता है इसलिए इसे हरी गोभी भी कहते है उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में जाड़े के दिनों में इन सब्जियों की खेती बड़ी सुगमता पूर्वक की जा सकती है जबकि हिमाचल प्रदेश , उत्तरांचल और जम्मू कश्मीर में इनके बीज भी बनाए जा सकते है। आगे आने वाले समय में सब्जियों का उत्पादन तथा निर्यात दोनों ही बढ़ने की काफ़ी संभावनाएँ हैं। जहाँ हम जानी पहचानी काफ़ी तरह की सब्जियाँ अपने देश में उगा रहे हैं वहां अभी भी कुछ ऐसी सब्जियाँ हैं जो आर्थिक व पौष्टिकता की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण हैं। इस तरह की सब्जियों में ब्रोकोली का नाम बहुत महत्वपूर्ण है। इसकी खेती पिछले कई वर्षों में धीरे–धीरे बड़े शहरों के आस–पास कुछ किसान करने लगे हैं। बडे महानगरों में इस सब्जी की मांग भी अब बढ़ने लगी है। ब्रोकोली की सफल खेती के लिये नीचे दी गई जानकारी लाभदायक होगी।

खेत की तैयारी

ब्रोकोली को उत्तर भारत के मैदानी भागों में जाड़े के मौसम में अर्थात् सितम्बर मध्य के बाद से फरवरी तक उगाया जा सकता है। इस फसल की खेती कई प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है, लेकिन सफल खेती के लिये बलुई दोमट मिट्टी बहुत उपयुक्त है। सितम्बर मध्य से नवम्बर के शुरू तक पौधा तैयार की जा सकती है बीज बोने के लगभग 4 से 5 सप्ताह में इसकी पौध खेत में रोपाई करने योग्य हो जाती हैं इसकी नर्सरी ठीक फूलगोभी की नर्सरी की तरह तैयार की जाती है। ब्रोकोली की लगभग सभी किस्में विदेशी हैं।

ब्रोकोली से स्वास्थ्य लाभ

यह कई पोषक तत्वों से भरपूर है। यह कई बीमारियों से बचाने के साथ ब्रेस्ट कैंसर और प्रोस्टेट कैंसर के भी खतरे को कम करती है। अपने स्वास्थ्य के प्रति सचेत और वजन कम करने की इच्छा रखने वाले लोगों के लिए ब्रोकोली अच्छा विकल्प है। ऐसा माना जाता है कि ब्रोकोली भूमध्य सागरीय उपज है। ब्रोकोली लैटिन शब्द 'ब्रैक्यिम' से बना है जिसका मतलब है शाखा। इसमें शक्तिशाली फाइटोकेमिकल (प्लांट–केमिकल) पाए जाते हैं, जो कैंसर जैसी घातक बीमारी से लड़ने में मदद करते हैं।

ब्रोकोली खाने के कई पोशकीय फायदे होते हैं। ब्रोकोली को पका कर या फिर कच्चा भी खाया जा सकता है, लेकिन अगर आप इसे उबाल कर खाएंगे तो आपको ज्यादा फायदा होगा। इस हरी सब्जी में लोहा,

*बी.बी.ऐ.ऊ. लखनऊ, **वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष, केवीके बहराईच, ***वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष, केवीके, बाराबंकी

प्रोटीन, कैल्शियम, कार्बोहाइड्रेट, क्रोमियम, विटामिन ए और सी पाया जाता है, जो सब्जी को पौष्टिक बनाता है। इसके अलावा इसमें फाइटोकेमिकल्स और एंटी–ऑक्सीडेंट भी होता है, जो बीमारी और बॉडी इंफेक्शन से लड़ने में सहायक होता है।

ब्रोकोली विटामिन सी से भरी हुई है, जो प्रतिरक्षा प्रणाली के समुचित कार्य को बनाए रखने के लिए एक महान पोषक तत्व मानी जाती है। ब्रोकोली क्रोमियम का बहुत अच्छी स्रोत है, जो मधुमेह पर नियंत्रण और शरीर में इंसुलिन के उत्पादन को नियंत्रित करती है। ब्रोकोली में बीटा–कैरोटीन होता है जो आंखों में मोतियाबिंद और मस्कुलर डीजेनरेशन होने से रोकती है। यह माना जाता है कि ब्रोकोली में यौगिक सल्फोरापेन होता है जो यूवी रेडियेशन के कारण होने वाले प्रभाव से त्वचा को नुकसान पहुंचाने और सूजन को कम करने में सहायक होती है।

ब्रोकोली में कैल्शियम, फास्फोरस, मैग्नीशियम और जिंक होता है, जो हड्डियों को मजबूत बनाता है। यह बुजुर्गों और गर्भवती महिलाओं के लिये बहुत अच्छी मानी जाती है क्योंकि इनमें ऑस्टियोपोरोसिस होने का खतरा बहुत ज्यादा होता है। ब्रोकोली शरीर को एनीमिया और एल्जाइमर से बचाती है क्योंकि इसमें बहुत ज्यादा आइरन और फोलेट पाया जाता है। ब्रोकोली को नियमित खाने से गर्भवती महिलाओं को मदद मिलती है। इसमें फाइटोकेमिकल्स होने के कारण, यह एंटी कैंसर न्यूट्रिशनल वेजिटेबल है। ब्रोकोली में कैरोटीनॉयड ल्यूटिन होता है जो हृदय की धमनियों को मोटा होने से रोकता है, जिससे हार्ट अटैक और अन्य हार्ट सबंधी बीमारियों का रिस्क टलता है। ब्रोकली खाने से न केवल स्वास्थ्य और पोषण मिलता है, बल्कि इसमें लो कैलोरी होने की वजह से वजन भी कम होता है।

खास जानकारी

ब्रोकोली हृदय के लिए फायदेमंद है, यह बात बहुत पहले से कही जाती रही है। लेकिन अब ब्रिटिश वैज्ञानिक यह भी बता रहे हैं कि ब्रोकोली किस तरह फायदेमंद है। शोधकर्ताओं को ब्रोकोली व अन्य हरी पत्तेदार सब्जियों में एक ऐसे रसायन के साक्ष्य मिले हैं जो धमनियों में रुकावट के खिलाफ शरीर के प्राकृतिक सुरक्षातंत्र को मजबूत बनाता है।

जलवायु

ब्रोकली के लिए ठंडी और आद्र जलवायु की आवश्यकता होती है यदि दिन अपेक्षाकृत छोटे हों तो फूल की बढ़ोत्तरी अधिक होती है फूल तैयार होने के समय तापमान अधिक होने से फूल छितरेदार ,पत्तेदार और पीले हो जाते हैं ।

मिट्टी

इस फ़सल की खेती कई प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है लेकिन सफ़ल खेती के लिये बलुई दोमट मिट्टी बहुत उपयुक्त है। जिसमे पर्याप्त मात्रा में जैविक खाद हो इसकी खेती के लिए अच्छी होती है हल्की रचना वाली भूमि में पर्याप्त मात्रा में जैविक खाद डालकर इसकी खेती की जा सकती है।

प्रजातियाँ

ब्रोकली की किस्मे मुख्यतया तीन प्रकार की होती है श्वेत , हरी व बैंगनी । इनमे हरे रंग की गंठी हुई शीर्ष वाली किस्मे अधिक पसंद की जाती है इनमे नाइन स्टार, पेरिनियल, इटैलियन ग्रीन स्प्राउटिंग या केलेब्रस, बाथम 29 और ग्रीन हेड प्रमुख किस्मे है।

संकर किस्मों में –पाईरेट पेक में,प्रिमिय क्राप,क्लीपर, क्रुसेर, स्टिक व ग्रीन सर्फ़ मुख्य है ।

ब्रोकोली की लगभग सभी क़िस्में विदेशी हैं। जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं–प्रीमियम क्रॉप, टोपर, ग्रीन कोमट, क्राईटेरीयन आदि। कई बीज कम्पनियाँ अब ब्रोकोली के संकर बीज भी बेच रहीं हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने हाल ही में पूसा ब्रोकोली 1 क़िस्म की खेती के लिये सिफ़ारिश की है तथा इसके बीज थोड़ी मात्रा में पूसा संस्थान क्षेत्रीय केन्द्र, कटराइन कुल्लू घाटी, हिमाचल प्रदेश से प्राप्त किये जा सकते हैं। अभी हाल भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान क्षेत्रीय केंद्र कटराई द्वारा ब्रोकली की के.टी. एस.9 किस्म विकसित की गई है इसके पौधे मध्यम उचाई के ,पत्तियां गहरी हरी, शीर्ष सख्त और छोटे तने वाला होता है।

लगाने का समय

उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में ब्रोकोली उगाने का उपयुक्त समय ठण्ड का मौसम होता है इसके बीज के अंकुरण तथा पौधों को अच्छी वृद्धि के लिए तापमान 20 –25 डिग्री सेल्सियस होना चाहिए इसकी नर्सरी तैयार करने का समय अक्टूम्बर का दूसरा पखवाड़ा होता है पर्वतीय क्षेत्रों में क़म उचाई वाले क्षेत्रों में सितम्बर– अक्टूबर, मध्यम उचाई वाले क्षेत्रों में अगस्त–सितम्बर और अधिक़ उचाई वाले क्षेत्रों में मार्च– अप्रैल में तैयार की जाती है।

बीज दर

गोभी की भांति ब्रोकली के बीज बहुत छोटे होते है। एक हेक्टेयर की पौध तैयार करने के लिये लगभग 375 से 400 ग्राम बीज पर्याप्त होता है ।

नर्सरी तैयार करना

ब्रोकोली की पत्ता गोभी की तरह पहले नर्सरी तैयार करते है और बाद में रोपण किया जाता है कम संख्या में पौधे उगाने के लिए 3 मी लम्बी और 1 मी चौड़ी तथा जमीन की सतह से 15 सेमी ऊँची क्यारी में बीज की बुवाई की जाती है क्यारी की अच्छी प्रकार से तैयारी करके एवं सड़ी हुई गोबर की खाद मिलाकर बीज को पंक्तियों में 4–5 से.मी. की दूरी पर 0.5 सेमी की गहराई पर बुवाई करते है बुवाई के बाद क्यारी को घास – फूस की महीन पर्त से ढक देते है तथा समय–समय पर सिचाई करते रहते है जैसे ही पौधा निकलना शुरू होता है ऊपर से घास – फूस को हटा दिया जाता है नर्सरी में पौधों को कीटों से बचाव के लिए नीम का काढ़ा या गोमूत्र का प्रयोग करें ।

रोपाई

नर्सरी में जब पौधे 8–10 सेमी या 4 सप्ताह के हो जायें तो उनको तैयार खेत में कतार से कतार, पक्ति से पंक्ति में 15 से 60 से. मी. का अन्तर रखकर तथा पौधे से पौधे के बीच 45 सें०मी० का फ़सला देकर रोपाई कर दें । रोपाई करते समय मिट्टी में पर्याप्त नमी होनी चाहिए तथा रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई अवश्य करें ।

खाद और उर्वरक

आर्गनिक खाद पौधों की अच्छी बढ़वार और अच्छे शीर्ष प्राप्त करने के लिए क्यारी की अंतिम बार तैयारी करते समय प्रति 10 वर्ग मीटर क्षेत्रफल में 50 किलो ग्राम गोबर की अच्छे तरीके से सड़ी हुई खाद , कम्पोस्ट खाद इसके अतिरिक्त आर्गनिक खाद 1 किलो ग्राम भू–पावर, 1 किलो ग्राम माइक्रो फर्टी सिटी कम्पोस्ट, 1 किलो ग्राम माइक्रोनीम, 1 किलो ग्राम सुपर गोल्ड

कैल्सी फर्ट , और अरंडी की खली   इन सब खादों को अच्छी तरह मिलाकर क्यारी में   बुवाई से पूर्व समान मात्रा में बिखेर लें इसके बाद क्यारी की जुताई करके बीज की बुवाई करें । और फसल जब 20–25 दिन की हो जाए तब सुपर गोल्ड मैग्नीशियम और माइक्रो झाइम का छिड़काव करें ।

रसायनिक खाद की दशा में

खाद की मात्रा प्रति हेक्टेयर खाद मिट्टी परीक्षण के आधार पर दे

गोबर की सड़ी खाद : 50–60 टन

नाइट्रोजन : 100–120 किग्रा प्रति हेक्टेयर

फॉस्फोरस : 45–50 किग्रा प्रति हेक्टेयर

गोबर तथा फ़ॉस्फोरस खादों की मात्रा को खेत की तैयारी में रोपाई से पहले मिट्टी में अच्छी प्रकार मिला दें। नाइट्रोजन की खाद को 2 या 3 भागों में बांटकर रोपाई के क्रमशः 25 ,45 तथा 60 दिन बाद प्रयोग कर सकते हैं। नाइट्रोजन की खाद दूसरी बार लगाने के बाद, पौधों पर परत की मिट्टी चढ़ाना लाभदायक रहता है ।

निराई–गुड़ाई व सिंचाई

मिट्टी मौसम तथा पौधों की बढ़वार को ध्यान में रखकर,इस फ़सल में लगभग 10–15 दिन के अन्तर पर हल्की सिंचाई की आवश्यकता होती है।

खरपतवार

ब्रोकोली की जड़ एवं पौधों की अच्छी बढ़वार के लिए क्यारी में से खरपतवार को बराबर निकालते रहना चाहिए गुड़ाई करने से पौधों की बढ़वार तेज होती है गुड़ाई के उपरांत पौधे के पास मिट्टी चढ़ा देने से पौधे पानी देने पर गिरते नहीं है ।

कीड़े व बीमारियाँ

काला सड़न, तेला, तना सड़न, मृदु रोमिल रोग यह प्रमुख बीमारियाँ हैं।

रोकथाम

इसकी रोकथाम के लिए 5ली देशी गाय के मठ्ठे में 2 किलो नीम की पची 100 ग्राम तम्बाकू की पची 1 किलो धतूरे की पची को 2 ली. पानी के साथ उबालें जब पानी 1 ली। बचे तो ठंडा करके छान के मठ्ठे में मिला ले 140 ली पानी के साथ (यह पूरे घोल का अनुपात है आप लोग एकड़ में जितना पानी लगे उस अनुपात में मिलाएं)   मिश्रण तैयार कर पम्प के द्वारा फसल में तर–बतर कर छिड़काव करें।

कटाई व उपज

फ़सल में जब हरे रंग की कलियों का मुख्य गुच्छा बनकर तैयार हो जाये शीर्ष रोपण के 65–70 दिन बाद तैयार हो जाते है तो इसको तेज़ चाकू या दरांती से कटाई कर लें। ध्यान रखें कि कटाई के साथ गुच्छा खूब गुंथा हुआ हो तथा उसमें कोई कली खिलने न पाएँ। ब्रोकोली को अगर तैयार होने के बाद देर से कटाई की जाएगी वह ढीली होकर बिखर जायेगी तथा उसकी कली खिलकर पीला रंग दिखाने लगेगी ऐसी अवस्था में कटाई किये गये गुच्छे बाजार में बहुत कम दाम पर बिक सकेंगे। मुख्य गच्छा काटने के बाद, ब्रोकोली के छोटे गुच्छे ब्रिकी के लिये प्राप्त होगें। ब्रोकोली की अच्छी फ़सल से लगभग 12 से 15 टन पैदावार प्रति हेक्टेयर मिल जाती है।

आय दोगुनी करने में अजवाइन की खेती की अहम भूमिका

गौरीशंकर वर्मा*, डॉ आर.के. दोहरे** एवं डॉ शेष नारायण सिंह***

अजवाइन की खेती विश्व तथा भारत में मसाले के रूप में लेते हैं अजवाइन सोलेनेसी कुल का पौधा हैं। इसका दूसरा नाम खुरासानी व वनस्पति नाम टेकस्पर्मम भी है। अजवाइन का प्रयोग हमारे दैनिक जीवन में आदि काल से होता चला आ रहा है। यह एक ऐसी देशी औषधि है जो गुण, कर्म एवं वानस्पतिक दृष्टि से भिन्न है। इसकी पत्ती और फूल की डालियों में एल्कोलाइडस पाया जाता है। इसके डंठल अधिक परिपक्व न होकर मुलायम ही कच्चे या पकाकर सूप में सुगंध के लिए अधिक प्रयोग किये जाते हैं। जिन्हें विभिन्न बीमारियों के उपचार में प्रयोग किया जाता है। आदि काल से अजवाइन का प्रयोग ठण्ड़ लगने ,खॉसी व अस्थमा में प्रयोग किया जाता रहा है। इसके बीजों का उपयोग दॉत दर्द में भी किया जाता है।

जलवायु और भूमि

जिस भूमि का पीएच मान 6.5 से 9 तक हो उस मिटटी में अजवाइन की खेती जहॉ धूप अधिक हो अच्छी तरह से की जा सकती है। अजवाइन की खेती के लिए हल्की दोमट व हल्की चिकनी उत्तम जल निकास वाली भूमि आसानी से उगायी जा सकती है। इसके अलावा यह एक शीतोष्ण जलवायु का पौधा है। परन्तु यह उप अनयनवृन्त क्षेत्रों में भी उगाया जा सकता जाता है। पहाड़ी क्षेत्रों में यह गर्मी के मौसम में उगायी जाती है तथा मैदानी क्षेत्रों में इसकी खेती ठण्ड़ी के मौसम में की जाती है।

प्रजाति

इसकी निम्नलिखित प्रमुख प्रजातियॉ हैं जिनकी खेती भारत में की जाती हैं।

आईसी–66 जिसे काली खुरासानी अजवाइन कहते हैं।

एचएम–1 इजिप्शियन खुरासानी अजवाइन के नाम से जाना जाता है।

एचएमआई–2 तथा एचएमआई–3

ये अधिक उपज देने वाली प्रजाति है जिनके दानें बड़े होते हैं।

गोल्डेन सेल्फ ब्लानचिंग

इसके डंठल मोटे व लम्बे होते हैं। पत्तियॉ चौड़ी होती हैं।पत्तियों के डंठल सुगंध वाले होते हैं।

यूटाह

यह किस्म गोल्डेन सेल्फ ब्लानचिंग से मिलती जुलती है। इसकी खेती कुछ ठण्डे स्थानों में की जाती है।

जाइंट–पास्कल

यह किस्म भी गहरे हरे रंग के पौधों वाली होती है। पत्तियॉ छोटी होती हैं।

खेत की तैयारी

जिस खेत में अजवाइन की खेती करना हो, उसकी दो–तीन बार हल से जुताई करनी चाहिये। अन्तिम एक जुताई रोटावेटर से करके मिटटी भुरभुरी बना लें। जुताई के समय ही 25 से 30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की दर से गोबर की खाद खेत में मिलाकर पाटा लगा दें। ध्यान रहे कि खेत में सूखी घास, खरपतवार तथा अन्य पिछली फसल के अवशेश न रह पायें।

*विववि(उद्यान),केवीके,बरासिन,सुलतानपुर, *प्राध्यापक (प्रसार शिक्षा), आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,कुमारगंज अयोध्या
***विववि (कृषि प्रसार), केवीके सिद्धार्थनगर

उर्वरक

अजवाइन के खेती के लिए नाइट्रोजन तथा फासफोरस अधिक महत्वपूर्ण पोषक तत्व हैं। इसकी पूर्ति के लिए 45 किग्रा नाइट्रोजन, 65–70 किग्रा फास्फोरस 50–60 किग्रा पोटाश प्रति हे0 की दर से लाइन में डालना उपयुक्त रहता है। इसके बाद जब फसल 45 दिन की हो जाये तब 40 किलो नाइट्रोजन की टापड्रेसिंग कर देना लाभप्रद रहता हैं। इसके बाद खेत में नमी बनाये रखने के लिए सिचाई करना आवश्यक हैं।

बीज की मात्रा

3 से 5 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर की दर से पर्याप्त होता है।

बीज की बुवाई

तैयार खेत में क्यारियॉ बनाकर इस फसल को 20 से 25 सेन्टीमीटर की दूरी पर कतार में बोते हैं। इसका बीज बहुत छोटा होता है इसलिये इसको बोते समय बहुत सावधानी अपनानी चाहिये। बुवाई करते समय यह घ्यान देना चाहिये की बीज मिटटी में एक से डेढ़ सेन्टीमीटर से ज्यादा गहराई में कभी नहीं बोया जाना चाहिये। बुवाई के तुरन्त बाद खेत में पानी अवश्य लगा दे जिससे बीजों का अंकुरण शीध्रातिशीघ्र हो सके।

निराई–गुड़ाई

अकुंरण के 10 से 15 दिन पर पहली निराई–गुडाई खरपतवार के अनुसार करनी चाहिए। अच्छे उत्पादन तथा पौधों के उचित विकास के लिए 2 से 3 बार निराई–गुड़ाई करने से पैदावार में अच्छी वृद्वि होती हैं।

सिंचाई

पहली सिंचाई बोने के तुरन्त बाद एवं दूसरी सिंचाई 8 से 10 दिन के अन्तराल पर उपलब्ध नमी के अनुसार सिंचाई करनी चाहिये। यह एक सिंचित फसल है। इसमें लगभग 4 से 5 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है।

पौध विरलीकरण

इस फसल में यह क्रिया करना अति आवश्यक होता है। जब फसल 35 से 40 दिन की हो जाये तब विरलीकरण की क्रिया अपनानी चाहिए जिससे पौध 10 से 12 सेन्टीमीटर की दूरी पर एक समान हो।

फसल की कटाई

इजिप्शियन खुरासानी अजवाइन जब 130 से 135 दिन की हो जाये तब इसके पौधौं को जमीन से कुछ उपर से काटा जाता है। काली खुरसानी अजवाइन 85 से 105 दिन की हो जाये और इसमें पचास प्रतिशत फूल आ जायें तब इसकी निचली पत्तियॉ तोड़ ली जाती हैं। इसके बाद उपर की पत्तियॉ एवं कोमल फल युक्त डालियॉ तोड़ कर अलग कर लिया जाता और उन्हे सुखा कर बीज अलग कर लिया जाता हैं। अजवाइन लगभग 140 से 150 दिन की हो जाये तब इसके पौधौं को जमीन से कुछ उपर से काटा जाता है।

उपज

इसकी खेती से लगभग एक हेक्टेयर 20 से 25 कुन्तल तक उपज प्राप्त किया जा सकता है।

पोषण वाटिका का महत्व

साधना सिंह*, दीप्ति गिरि* एवं मजूलता मिश्रा*

पोषण वाटिका या गृह वाटिका का अर्थ है घर के आस–पास उपलब्ध जमीन पर परिवारिक श्रम से परिवार के इस्तेमाल हेतु मौसमी फलों व सब्जियों को उगाना ताकि अपने परिवार के सभी सदस्यों की दैनिक पोषण आवश्यकताओं को मुख्यतः विटामिन व खनिज लवण की पूर्ति हो सके।

प्रोटीन व ऊर्जा की आवश्यकतायें अनाज, दालों मांस, अण्डा, तिलहनी फसलों, सूखे मेवे व अन्य खाद्य पदार्थों से पूरी हो जाती है। परन्तु सुरक्षात्मक पोषक तत्व जैसे विटामिन व खनिज लवण हमें मुख्यतः फल व सब्जियों से मिलते हैं जिन्हें दैनिक आहार में लेना आवश्यक है अतः फल एवं सब्जियां यानि सुरक्षात्मक पोषक तत्वों की पूर्ति में गृह वाटिका यानि पोषण वाटिका का महत्वपूर्ण योगदान है।

एक वयस्क व्यक्ति को प्रतिदिन 250–300 ग्राम सब्जियों की आवश्यकता होती है जिसमें लगभग

100 ग्राम कंद वाली सब्जियां (आलू, शकरकंद, सूरन आदि)

125 ग्राम हरी पत्तेदार सब्जियां

75 ग्राम अन्य सब्जियां

30 ग्राम फल की जरूरत होती है

पोषण वाटिका का मुख्य उद्देश्य है कि प्रतिदिन रसोई घर से निकलने वाले कूड़ा–करकट और पानी का इस्तेमाल करके घर की फल एवं सब्जियों की दैनिक जरूरतों को पूरा करना है।

बाजार में बिकने वाली चमकदार फल–सब्जियों को रासायनिक उर्वरक प्रयोग करके उगाया जाता है। रासायनों का इस्तेमाल खरपतवार व कीड़े रोकने के लिए किया जाता है। इन रासायनिक दवाओं का कुछ अंश फल एवं सब्जी में बाद तक बना रहता है जिनको खाने से बीमारियां से लड़ने की क्षमता कम होती जा रही है और विभिन्न प्रकार की बीमारियां बढ़ रही हैं। इसलिए हमें अपने घर के आस–पास की खाली जगह का इस्तेमाल रसायन रहित एवं जैविक खाद के माध्यम से फल एवं सब्जियों को उगाना चाहिए।

गृह वाटिका/पोषण वाटिका लगाने के अनेक लाभ हैं

(1). अधिक स्वादिष्ट एवं ताजी सब्जियों और फलों की आपूर्ति सुनिश्चित होगी।

(2). सब्जियाँ एवं फल आवश्यकतानुसार सरलता से उपलब्ध हो जाएंगे। इससे बाजार जाने में होने वाले व्यय, समय और श्रम की काफी बचत होगी।

(3). गृह वाटिका में उगाई गई सब्जियों व फलों के खाने से धन की बचत होगी।

(4). गृह वाटिका में उगाई गई सब्जियों में अधिक पोषक तत्व होते हैं विशेषतः विटामिन व खनिज लवण। ऐसा मुख्यतः लाने व ले जाने या भण्डारण के दौरान होने वाली पोषक तत्वों हानि के फलस्वरूप होता है।

(5). गृह वाटिका से बिन मौसम के भी सब्जियां व फल प्राप्त किए जा सकते हैं। अक्सर बाजार में ऐसी सब्जियां व फल काफी मंहगें मिलते हैं।

(6). घर के कूड़े–कचरे का खाद के रूप में उपयोग किया जा सकता है तथा रसोई के बेकार पानी को भी सिंचाई में उपयोग में लाया जा सकता है।

(7). इससे अतिरिक्त समय का सदुपयोग होता है।

(8). गृह वाटिका लगाकर महिलाएं अपनी व अपने परिवार की आर्थिक स्थिति को मजबूत बना सकती हैं।

(9). यह बच्चों के प्रशिक्षण का भी अच्छा साधन है।

(10). यह मनोरंजन एवं व्यायाम का भी एक अच्छा साधन है।

गृह वाटिका बनाते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए

खाद्य विज्ञान एवं पोषण विभाग
आचार्य नरेन्द्र देव कृशि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

(1). गृह वाटिका के लिये ऐसे स्थान का चुनाव करना चाहिए, जहां पानी पर्याप्त मात्रा में मिल सके। जैसे नलकूप या कुएं का पानी, रसोई घर में इस्तेमाल किया गया पानी पोषण वाटिका तक पहुँच सके।

(2). स्थान खुला हो ताकि उसमें सूरज की रोशनी (धूप) आसानी से पहुँच सके।

(3). जगह आयताकार हो तो अच्छा रहता है।

(4). पांच सदस्यों का परिवार जिसमें पति–पत्नी एक बच्चा तथा दादा–दादी हों उनकी सब्जियों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए 48 वर्ग मीटर भूखंड पर्याप्त रहेगा।

(5). सब्जियों के साथ ही साथ फलों के वृक्ष भी लगायें जैसे आम, पपीता, अमरूद, करौंदा, आंवला, बेल आदि भूखंड के उत्तरी व दक्षिण–पश्चिम की ओर लगाना चाहिए।

(6). भूखण्ड के चारों तरफ बाड़ लगाकर उस पर लता वाली सब्जियों को चढ़ाया जा सकता है।

(7). मेंड़ों पर जड़ वाली सब्जियां जैसे– मूली, गाजर आदि उगाई जा सकती है।

(8). गहरी जड़ों वाली सब्जियों के साथ उथली जड़ों वाली सब्जियों की मिश्रित खेती करनी चाहिए।

(9). फसल चक्र व सघन फल पद्धति को अपनाना चाहिये।

(10).भूखंड के एक कोने में कम्पोस्ट पिट बनाना चाहिए ताकि रसोई घर की व्यर्थ चीजें उसमें डाल कर खाद तैयार की जा सके।

(11).इन गड्ढों के ऊपर छाया के लिए सेम जैसी लता चढ़ा देनी चाहिए।

(12).वाटिका की सुरक्षा के लिए चारों ओर कांटों वाली बाड़ लगा लेनी चाहिये।

गृह वाटिका के लिए भूखंड की तैयारी

(1). भूखण्ड/जमीन की अच्छी तरह जुताई करनी चाहिए अथवा फावड़े से गुड़ाई अच्छी तरह करनी चाहिए।

(2). ढेलों को तोड़कर मिट्टी को बारीक और भुरभुरा कर देना चाहिए।

(3). खाद डालकर उसे मिट्टी में अच्छी तरह मिला लें। 45 वर्गमीटर में 2.5 से 3.0 क्विंटल सड़ी हुई गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट खाद और 2–3 किग्रा0 नीम की खली डालें।

(4). यदि नीम की खली नहीं मिलाई गई हो तो मैलाथियान पाउडर (10 प्रतिशत) कीटनाशक प्रति 45 वर्ग मीटर की दर से मिलाएं।

(5). इसके बाद क्यारियां बना लें।

(6). सब्जियों की फसल तैयार होने में आमतौर पर कम समय लेती है अतः इनकी वृद्धि के लिए जल्दी से मिलने वाले पोषक तत्व चाहिए होता है। गोबर की खाद व कम्पोस्ट जैसी कार्बनिक खादों से पोषक तत्व धीरे–धीरे निकलते हैं रासायनिक खादों का भी थोड़ा बहुत उपयोग किया जा सकता है।

(7). 45 वर्ग मीटर भूखंड में भूमि तैयार करते समय 200–300 ग्राम यूरिया, 500 ग्राम डाई अमोनियम फास्फेट, 500 ग्राम यूरेट आफ पोटाश मिला लें।

(8). बीजों के अंकुरण के पश्चात् 200–300 ग्राम यूरिया का प्रयोग करना चाहिए।

(9). यदि हम जैविक गृह वाटिका बना रहे हैं तो 45 वर्ग मीटर के भूखण्ड में 5–6 क्विंटल गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट खाद, 4–5 किलो ग्राम नीम अथवा सरसों की खली, एक किलोग्राम हड्डी का चूरा एवं एक किलोग्राम लकड़ी की राख डालें।

पोषण वाटिका में हर तरह की सब्जियां लगानी चाहिए जैसे

- कुकुरबिटेसी कुल की– कद्दू, लौकी, करेला खीरा आदि।
- लेग्यूमिनेसी कुल की– सेम, लोबिया आदि।
- क्रूसीफेरी कुल की– बंदगोभी, फूलगोभी, गांठ गोभी आदि।
- जड़ वाली– मूली, गाजर, शलजम आदि।
- कन्द वाली– आलू, शकरकंद, सूरन आदि।
- बल्ब– प्याज, लहसुन आदि।
- पत्तियों वाली– पालक, मेथी, चौलाई, धनिया आदि।
- फलों में– आंवला, अमरूद, पपीता, आम, नींबू, केला, अंगूर, आदि लगाए जा सकते हैं।

विषाक्त पौधों की विषाक्तता का पशुओं में प्रभाव, उपचार एवं बचाव के उपाय

डॉ विद्या सागर*, डॉ एस.एन, लाल** एवं डॉ ए.के. राय***

प्रतिवर्ष देश में लगभग सूखे, बाढ़ जैसी बिभिन्न प्रकार की प्राकृतिक आपदाओं का सामना करना पड़ता है। ऐसी स्थिति में पशुओं के चारे–दानें की समस्या उत्पन्न हो जाती है। ऐसी परिस्थिति पशुओं में मुख्य रूप से चरनें वाले रोमान्थी पशु जैसे गाय, भैस, भेड़ व बकरी स्वभाव से अविवेकी आहारी होते है तथा भूख लगने पर व मुख्यतः खाद्य पदार्थो के अभाव में ये पशु विषाक्त पौधों का सेवन भी कर लेते है। इन पौधों में मौजूद विषाक्त अवयव पशुओं में विषाक्तता का कारण बनते है। पशुओं में विषाक्तता की अवधि कुछ क्षणों से लेकर कई सप्ताह तक हो सकती है। मुख्यतया विषक्तता की अवधि इस बात पर निर्भर करती है कि पशु के शरीर में विष की कितनी मात्रा उपस्थित है, उसका स्वास्थ्य कैसा है व पशु की नस्ल क्या है। एक विषाक्त पौधा वह है जिसको सामान्य अवस्था में या चारे के अभाव के समय या आत्याधिक भूख लगने पर खाने से पशु के स्वास्थ पर दुष्प्रभाव पड़ता है तथा कभी कभी मृत्यु भी हो जाती है। प्रमुख विषाक्त पौधों का विवरण निम्न है जो प्रायः पशुओं में विषाक्तता करते है।

सायनायड युक्त पौधें की विषाक्तता

यह वह पौधे है जिनमें हाइड्रोसायनिक अम्ल अथवा सायनोजैनिक ग्लाइकोसाइड होते है। भारतवर्ष में पशुओं में साइनाइड विषाक्तता का प्रमुख श्रोत सारघम अथवा ज्वार या चरी है। बढ़वार की कम अवस्था में अथवा सूखे की स्थिति में इन पौधों से साइनायड की मात्रा अधिक हो जाती है इसके अतिरिक्त नाइट्रोजन युक्त खरपतवारनाशकों व खादों का प्रयोग करने से भी चरी में साइनायड की मात्रा बढ़ जाती है। इसके अतिरिक्त बकरियों व भेड़ों में यह विषाक्तता कीकर (एकेसिया ल्यूकोफोलिया) की कोपलों को खाने से भी हो जाती है। इन चारों में उपस्थित हाइड्रो सायनिक अम्ल साइटोक्रोम आक्सीड्रेज नामक एंजाइम द्वारा रक्त की ऑक्सीजन के उपयोग को रोक देता है जो पशु की मृत्यु का कारण बनता है।

विषाक्तता के लक्षण

इस विषाक्तता में पशु अत्याधिक उत्तेजित हो जाता है लड़खड़ाने लगता है, सांस लेने में कठिनाई होती है। ऑखों से पानी गिरता है तथा अत्याधिक लार भी आती है। ऑखों की पुतलियां ठण्डी हो जाती है तथा श्लेष्मा झिल्लियॉ ईट की भॉति लाल हो जाती है। अगर उपचार न किया जाये तो पशु की मृत्यु 10 से 30 मिनट में हो जाती है।

रोकथाम व उपचार

साइनायड विषाक्तता से पशु का उपचार अत्यधिक शीघ्रता से किया जाना चाहिए। इसके प्रतिकारक के रूप में सोडियम थायोसल्फेट 0.5–1 ग्राम प्रति किलो शरीर भार की दर से 25 % पानी के घोल में तथा सोडियम नाईट्राइट 15–25 मि0ग्रा0 प्रति किलो शरीर भार की दर से 1 % पानी के घोल में धीरे–धीरे नस में देना चाहिए। इसकी रोकथाम हेतु पशु को 3–4 लीटर सिरका 10–15 लीटर ठण्डे पानी में मिलाकर पिलाने

*सह प्राध्यापक/विषय बस्तु विशेषज्ञ (पशु विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, पांती पो0–मंशापुर, अम्बेडकरनगर–224168, उ.प्र.
**प्राध्यापक/विषय बस्तु विशेषज्ञ (पशु विज्ञान) कृषि विज्ञान केन्द्र, बस्ती, उ.प्र.
**सह प्राध्यापक/ विषय बस्तु विशेषज्ञ (पशु विज्ञान)
प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एव प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

से विषाक्तता का प्रभाव काफी कम हो जाता हैं चिकित्सा पशु चिकित्सक की देखरेख में ही की जानी चाहिए।

अरण्डी के बीजों की विषाक्तता

अरण्डी के बीजों के सेवन से ज्यादा विषाक्तता होती है। अरण्डी की खली से भी विषाक्तता हो जाती है, जिसमें रिसिन नामक जहरीला पदार्थ मौजूद रहता है, जो शरीर की कोशिकाओं में राइबोसोम को खंडित कर देता है इसके अतिरिक्त रसिन पशुओं की आँतो की ऊपर सतह को क्षति भी पहुॅचाता है। घोड़े रिसिन की विषाक्तता से ज्यादा प्रभावित होते है।

विषाक्तता के लक्षण

अरण्डी के सेवन के कुछ समय बाद ही लक्षण आने लगते हैं। पशुओं में पेट दर्द छटपटाना, दस्त आना प्रमुख है। पशुओं की मृत्यु प्रायः अत्यधिक दस्त व पेचिस, जो खूनी भी हो सकती है, के कारण होती है।

उपचार व बचाव

आंतों में रिसिन विष के प्रभाव को कम करने के लिये अत्यधिक पानी उदरनलिका के माध्यम से देना चाहिए तथा यदि संभव हो तो पशु को उल्टी भी करायी जा सकती है। चिकित्सा प्रायः लक्षणों के आधार पर ही की जाती है तथा डेक्सट्रोज सेलाइन, विटामिन तथा दर्द निवारक औषधियां आवश्यकता के अनुसार चिकित्सक की देखरेख में देना चाहिए।

लेंन्टाना पौधे की विषाक्तता

यह सबसे अधिक विषाक्ता खरपतवारों में से एक है। यह एक झाड़ीदार पौधा होता है जिस पर चौड़ी पत्तियों के साथ–साथ छोटे–छोटे लाल गुलाबी या पीले रंग के फूल आते है। लेंटाना अन्य चारों की वृद्वि को भी रोकता है। इसकी पत्तियों में लेंटीडीन नामक यकृत विष होता है, जो यकृत की कोशिकाओं को भारी नुकसान पहुंचाता है तथा बिलिसिबिन का स्तर काफी घट जाता है तथा पशु पीलिया से ग्रसित हो जाता है। इसके अतिरिक्त यकृत में फाइलोएरिथ्रिन का स्तर भी बढ जाता है तथा पशुओं में फोटोसेसिटाइजेशन के लक्षण आ जाते है।

विषाक्तता के लक्षण

सामान्यतया पशु लेंटाना को इसके तीखे स्वाद के कारण खाना पसन्द नही करते परन्तु चारे के अभाव में विशेषकर बकरिया इसको चर लेती है जिसके कारण से विषाक्तता के लक्षण प्रकट होने लगते है। पशु जुगाली करना बन्द कर देता है, चारा नहीं खाता है, कब्ज हो जाता है व पीलिया के लक्षण आने लगते हैं, ऑखों की पुतलिया सूज जाती है, तथा थूथन कान व शरीर के अन्य हिस्सों की खाल फटने लगती है।

उपचार व बचाव

इसका विशेष उपचार नहीं है तथा मुख्य रूप से लक्षणों के आधार पर ही चिकित्सा की जाती है। पशुओं को डेक्स्ट्रोज सलाइन देते है तथा यकृतीय विकारों की चिकित्सा की जाती है। पशुओं में विष के अवशेषण को रोकने हेतु एक्टीवेटेड चारकोल 4–5 ग्राम प्रति किलो शरीर भार की दर से 15–20 लीटर पानी में घोलकर बड़े पशुओं में देते है। बकरियों को 400–500 ग्राम एक्टीवेटेड चारकोल 3–4 लीटर पानी में घोलकर देना चाहिए।

आर्जीमोन पौधे की विषाक्तता

यह भरभाड़ या बाहयादुंदी अथवा कटीली के नाम से भी जाना जाता है इसकी पत्तियां चौड़ी कांटेदार तथा पीले फूल आते हैं और इसके बीज राई की तरह से होते है। इस पौध के तेल में सेंगनेरीन नामक विष पाया जाता है, जो मनुष्यों व पशुओं में ड्रप्सी नामक बीमारी उत्पन्न करता है।

विषाक्तता के लक्षण

यह विषाक्त पौधे के खाने से पशुओं के बाहरी अंगों जैसे नाक, कान, खुरों आदि की किनारे सूज जाते है। पाचन सम्बन्धी विकार पैदा हो जाते है तथा मनुष्यों की आंखो में मोतियाबिन्द व ड्राप्सी नामक बीमारी हो जाती है।

उपचार व रोकथाम

केवल लक्षणिक उपचार ही उपलब्ध है तथा इसकी रोकथाम हेतु इस खरपतवार को खेतों से शुरू में ही उखाड़कर फेंक देना चाहिए।

ब्रेकन फर्न पौधे की विषाक्तता

यह पौधे प्रायः पहाड़ी क्षेत्रों, नदी व नालों के किनारों पर बहुतायत में होता है इसकी पत्तियॉ पतली कटावदार होती है तथा छुई–मुई के पौधों की पत्ती की तरह होती है।

चारे के आभाव में पशु इसे खा लेते है। इसमें थाइमिनेज नामक जो विष होता है जो पशुओं में विटामिन बी, की कमी कर देता है, इसके अतिरिक्त इसमें विद्यमान टेकुलासाइड रोमंथी पशुओं में विषाक्तता पैदा करता है।

विषाक्तता के लक्षण

पशुओं में भूख में कमी आ जाती है तथा ऑख व नाक से पानी आने लगता है गले में सूजन आ जाती है जिससे सांस लेने में कठिनाई होती है। पशु जुगाली करना बन्द कर देता है तथा शरीर का तापमान भी बढ़ जाता है। नथुने तथा थूथन सूख जाते है। कुछ समय उपरान्त गोबर में खून आने लगता है तथा पेशाब में भी खून आने लगता है तथा पशुओं में मृत्यु से पहले शरीर तापमान काफी बढ़ जाता है तथा पशु खून त्यागना भी बन्द कर देता है।

उपचार व बचाव

पशु को फर्न युक्त चारा नहीं खाने देना चाहिए। रक्त की कमी में दूसरे उसी जाति के पशु का खून भी दिया जा सकता है तथा इसके साथ–साथ लाक्षणिक उपचार के साथ विटामिन बी, व विटामिन के युक्त औषधि दी जाती है।

पार्थेनियम पौधे की विषाक्तता

यह एक खरपतवार पार्थेनियम हिस्टरोफोरस के खाने से गाय, भैस, बैल व बकरी आदि में होती है। इसका पौधा 2–3 मीटर लम्बा तथा पतली–लम्बी पत्तियॉ होती है तथा इस पर छोटे–छोटे सफेद गांठदार फूल खिलते है जो सूखकर चारों तरफ फैल जाते है। इस पौधे में पार्थेनिन नामक जहर होता है। पशुओं में इस पौधे को लगातार 6–7 दिन चरने पर विषाक्तता के लक्षण आ जाते है।

विषाक्तता के लक्षण

पशु की त्वचा पर छाले पड़ जाते है उससे पहले पशु खूब खुजलाता है। ऑखों की पलकों पर सूजन आ जाती है तथा पशु खूब दमें की तरह खांसता है। बछड़ों में वृद्वि कम हो जाती है तथा दुधारू पशुओं में दूध की मात्रा गिर जाती है।

उपचार व बचाव

उपचार लक्षणिक ही होता है तथा त्वचा के छालों हेतु उपर्युक्त एण्टीसेप्टिक क्रीम लगानी चाहिए। इसके अतिरिक्त लिवर टॉनिक पशुओं को दिये जाते है तथा एलर्जी का उपचार किया जाता है।

अतः किसान भाई उक्त प्रमुख विषाक्त पौधों को पहचान कर तथा पशुओं को इन पौधे को खाने से दूर रखकर तथा विषाक्तता का पशुओं में लक्षण पहचान कर उचित चिकित्सा करवा कर अपने पशुओं को स्वस्थ्य रख सकते हैं तथा अच्छा उत्पादन प्राप्त कर सकते है।

अक्टूबर माह में किसान भाई क्या करें

फसलो में
डॉ. सौरभ वर्मा
विषय वस्तु विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान)

1. दांतेदार नरेन्द्र हंसिया से अगेती धान की कटाई वैहिक परिपक्वता पर करें।
2. रोग ग्रसित धान की बाली को निकाल कर झूठा कड़वा रोग का नियन्त्रण करें।
3. उपयुक्त नमी पर 20 अक्टूबर से सिंचित दशा में जौ की आजाद, के 141 लक्षण प्रजातियों की बोआई प्रारम्भ करें।
4. चने की टाइप–3, राधे के 850, काबुली, पन्त जी 144 एवं उकठा अवरोधी, मटर की टा 163, रचना मालवीय मटर 2, पन्तनगर 5, पाउडरी मिल्डूय अवरोधी एवं मसूर की टा 8, पन्त एल 406 व 234 प्रजातियों की बोआई राइजोबियम कल्चर से उपचारित करने के बाद ही करें।
5. चना और मटर का 75–100 किग्रा तथा मसूर का 30–40 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर बोयें। कतार से कतार की दूरी चना में 30–35 सेमी, मटर में 30 सेमी तथा मसूर 20–25 सेमी रखें।
6. तोरिया की बोआई के 25 दिन बाद पहली सिंचाई करें तथा नत्रजन 30 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से टापड्रेसिंग करें।
7. सरसों एवं लाही में बोआई के 15–20 दिन के अन्दर विरलीकरण से आपसी दूरी 15 सेमी कर दें।

सब्जी एवं उद्यान में
डॉ. एस. के. वर्मा
सह प्रशिक्षक (वानिकी)

1. बसन्तकालीन टमाटर, मिर्च, बैंगन तथा मध्यम पिछेती फूलगोभी, पातगोभी, गांठगोभी जिसकी पौध सितम्बर के प्रथम पखवारे में डाले हों उसकी रोपाई कर दें।
2. सितम्बर के दूसरे पखवारे में डाली गयी पिछेती पातगोभी की पौध की रोपाई द्वितीय पखवारे में अवश्य कर दें।
3. अगेती आलू को 10 अक्टूबर तक तथा मुख्य फसल को अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह तक बो दें।
4. आम, अमरूद, नींबू, कटहल आदि में संस्तुत उर्वरक तथा खाद का प्रयोग करें।
5. पपीता लगाने का कार्य 15 अक्टूबर तक कर दें।
6. नये बागों में निकाई–गुड़ाई सम्पन्न करें।
7. नये बागों के बीच में सहफसली खेती के लिये रबी की उपयुक्त फसलों की बोआई करें।
8. परवल से अधिक उपज प्राप्त करने के लिये उन्नतशील प्रजातियां जैसे एफपी 3, एफपी 4, स्वर्णरेखा, बीबीआरपीजी 1, आईआईवी आरपीवी 105 की प्रवर्धन का उचित समय सितम्बर होता है परन्तु नदियों के किनारे दियरा भूमि पर परवल की रोपाई अक्टूबर, नवम्बर में की जाती है। परवल का प्रवर्धन मुख्य रूप से बेलों के द्वारा होता है इसको लगाते समय प्रत्येक दस मादा पौधों के बाद एक नर पौधे की बेल लगाना आवश्यक होता है।

पौध संरक्षण
डॉ. बी. पी. चौधरी
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पादप रोग)

1. सैनिक कीट का नियन्त्रण मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत धूल 25 किग्रा प्रति हेक्टेयर से करें।
2. बीज शोधन 2 ग्राम थीरम+1 ग्राम कर्वेन्डाजीम प्रति किग्रा बीज की दर से करें।
3. खरपतवार नियन्त्रण के लिये एक किग्रा वासालीन 1000 लीटर पानी में घोल कर प्रति हेक्टेयर जमाव के पूर्व छिड़काव करें।
4. सब्जी बीज को 1 ग्राम कर्बेन्डाजिम दवा को प्रति किग्रा बीज को शोधित कर बुवाई करें।
5. आम के गुच्छा रोग की रोकथाम हेतु एन ए 200 पी पी एम अर्थात 200 मिग्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

पशुपालन
डॉ. अनिल कुमार
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु विज्ञान)

1. खुरपका–मुंहपका बीमारी से बचाव हेतु दुधारू पशुओं में टीकाकरण करायें एवं पन्द्रह दिन बाद उन्हीं पशुओं को रिन्डरपेस्ट (पोकनी) का भी टीका लगवा दें।
2. कार्तिकी ऊन की कटाई का कार्य पूरा करें।
3. मांस उत्पादन करने वाली मुर्गियों के उचित विकास हेतु उत्तम एवं सन्तुलित आहार प्रयोग करें।
4. एक दिन के चूजों में रानीखेत एफ 1, छः सप्ताह पर रानीखेत एफ 2 तथा 8 सप्ताह की उम्र में चेचक से बचाव हेतु टीकाकरण करायें।
5. भूमिहीन, लघु व सीमान्त कृषकों के लिये बकरी पालन एवं अच्छा एवं लाभकारी रोजगार है इसके लिये बकरियों की प्रमुख नस्लें जैसे जमुनापारी, बरबरी, ब्लैक बंगाल, कच्छी, मालवारी नस्लें प्रमुख हैं इनसे किसान भाई अच्छा उत्पादन प्राप्त कर आर्थिक लाभ उठा सकते हैं।

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के

प्रश्न : ऊसर में कौन–कौन सी फसल ली जा सकती है और कब–कब किन–किन समयों में?
(श्री रामयज्ञ यादव, ग्राम खजुरहट, जनपद अयोध्या)

उत्तर : ऊसर भूमि में उपयुक्त सुधारकों जैसे जिप्सम अथवा पाइराइट मई–जून में प्रयुक्त करने के उपरान्त जुलाई में धान की रोपाई करनी चाहिए। धान कटने के बाद रबी में जौ अथवा गेहूं की फसल उगानी चाहिए। ऐसे में खेतों को प्रायः किसान भाई गर्मी में खाली छोड़ देते हैं जिनसे हानिकारक लवण पुनः जमीन के सतह पर जमा हो जाते हैं। अतः यह आवश्यक है कि गर्मी में भी कोई न कोई फसल ली जाये। इस प्रकार तीन वर्ष लगातार धान जौ/गेहूं ढैंचा क्रम अपनाना चाहिए।

प्रश्न : अच्छे किस्म का रबी से सम्बन्धित फसलों के बीज कहां प्राप्त करें?
(श्री जंग बहादुर यादव, ग्राम नवाबगंज, जनपद गोंडा)

उत्तर : चना, मटर, तोरिया, सरसों तथा गेहूं का बीज नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या के बीज तकनीकी विभाग तथा चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर से प्राप्त कर सकते हैं, वैसे प्रत्येक जनपद के कृषि विभाग द्वारा भी उन्नत किस्म का बीज उपलब्ध कराया जाता है

प्रश्न : बरानी दशा में गेहूं की खेती में उर्वरक की कितनी मात्रा डालें?
(श्री स्वामीनाथ सिंह, ग्राम वासन, जनपद अयोध्या)

उत्तर : बरानी दशा में गेहूं की खेती के लिये 40:30:30 किग्रा के अनुपात में क्रमशः नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें। उर्वरक की यह सम्पूर्ण मात्र बुवाई के समय कूड़ों में बीज के दो–तीन सेमी नीचे नाई/चोंगा द्वारा बेसल ड्रेसिंग के रूप में देना चाहिए। बाली निकलने से पूर्व वर्षा हो जाने पर 15 से 20 किग्रा प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन की टापड्रेसिंग लाभजनक होती है। यदि वर्षा न हो तो 2 प्रतिशत यूरिया का पर्णीय छिड़काव किया जाना फायदेमंद होगा

प्रश्न : राई सरसों के प्रमुख रोग कौन–कौन से हैं तथा उनका नियंत्रण कैसे करें?
(श्री हंसराज, ग्राम–धनपतगंज, जनपद अयोध्या)

उत्तर : राई सरसों में लगने वाले रोगों में झुलसा, सफेद गेरूई एवं तुलासिता रोग प्रमुख है। झुलसा रोग होने पर मैंकोजेब 2 किग्रा अथवा कॉपर आक्सीक्लोराइड 3 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। सफेद गेरूई के नियंत्रण हेतु रीडोमिल (एम जेड 78) 2.5 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 800–1000 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। तुलासिता रोग होने पर सफेद गेरूई के नियंत्रण वाले रसायन का प्रयोग करना चाहिए।

प्रश्न : चने में उकठा रोग लग जाता है क्या करें?
(श्री राज करन सिंह, ग्राम–डेउड़ी बाजार, जनपद अयोध्या)

उत्तर : चने में उकठा रोग से बचाव हेतु गर्मियों में मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई करने पर मृदाजनित रोगों का नियंत्रण करने में सहायता मिलती है। जिन खेत में उकठा रोग अधिक लगता हो उसमें तीन–चार वर्ष तक चना की फसल नहीं लेना चाहिए। बुवाई से पूर्व बीज को 5 ग्राम ट्राइकोडरमा या 4 ग्राम ट्राइकोडरमा+1 ग्राम कार्बेन्डाजिम से शोधित कर बुवाई करना चाहिए।

प्रश्न : अण्डा उत्पादन हेतु मुर्गियों की कौन–सी नस्ल अच्छी पायी जाती है?
(श्री महताब, ग्राम–खन्डासा, जनपद अयोध्या)

उत्तर : अण्डा उत्पादन हेतु व्हाइट लेगहार्न, रोड आइसलैण्ड रेड नस्लें अच्छी पायी गयी हैं परन्तु व्यवसायिक अण्डा उत्पादन हेतु व्हाइट लेगहार्न नस्ल सबसे अच्छी पायी गयी है जो एक वर्ष में लगभग 280 से 320 अण्डे का उत्पादन करता है परन्तु अच्छा उत्पादन प्राप्त करने के लिये इसका वैज्ञानिक तरीके से प्रबन्धन करना आवश्यक है। अधिक जानकारी हेतु कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, फैजाबाद से सम्पर्क करें।

पंजीयन संख्या - 54461/91

डाक पंजीयन संख्या एल. डब्लू./एन.पी. 34

प्रति रूपये 25/–मात्र

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

द्वारा

कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र

के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रामोपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य रु.
आधुनिक मधुमक्खी पालन एवं प्रबन्ध	20.00
जिमीकन्द की खेती	15.00
मशरूम उत्पादन एवं उपयोगिता	12.00
किसानोपयोगी फसल सुरक्षा तकनीक	50.00
फसल उत्पादन तकनीक	35.00
जीरो टिल सीड कम फर्टी ड्रिल	10.00
फल–सब्जी परीक्षण एवं मानव आहार	50.00
गन्ने की आधुनिक खेती	15.00
जीरो टिलेज गेहूँ बोआई की एक विश्वसनीय तकनीक	20.00
केचुआ पालन (वर्मीकल्चर) एवं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन	10.00
व्यावसायिक कुक्कुट (ब्रायलर) उत्पादन	20.00
फसलों के सूत्रकृमि रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबन्धन	25.00
आय संवर्धन हेतु प्रमुख सब्ज़ियों की उत्पादन तकनीक	25.00
गृहणियों के लिए बेकिंग कला	25.00
स्वच्छ दूध उत्पादन तकनीक एवं उसका महत्व	20.00
गायों एवं भैसों के मुख्य रोग, टीकाकरण एवं संतुलित पशु आहार	20.00

मुद्रित

सेवा में,
श्री/श्रीमती

प्रेषक:
प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या की ओर से डॉ. ए.पी. राव निदेशक प्रसार द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित

शिशु मक्का (बेबी कोर्न) की खेती

*रेनू आर्या, *सोनम आर्या एवं **आर0एल0 आर्या

मक्का की फसल भारतवर्ष में ही नहीं बल्कि विश्व में उगाई जाने वाली एक प्रमुख फसल है। अमेरिका में मक्का को सोना फसल के नाम से भी जाना जाता है। भारतवर्ष में मक्का की फसल खरीफ, रबी एवं जायद ऋतुओं में अर्थात वर्शभर उगाई जाती है। मक्का की उत्पादकता भी अन्य लघु धान्य फसलों की अपेक्षा अधिक है। आजकल मध्य उत्तर प्रदेश जैसे कन्नौज, फर्रूखाबाद, कानपुर, इटावा आदि जिलों में आलू की कटाई के पश्चात जायद में मक्का की खेती का प्रचलन दिनो दिन बढता जा रहा है। चूंकि आलू की फसल उगाने से मृदा की उर्वराशक्ति में काफी बृद्धि हो जाती है जिसका उपयोग मक्का की फसल उगाने में किया जा सकता है। मक्का की फसल पर परागणित वाली फसल है इसमें नर पुष्प ऊपर निकलते हैं जबकि मादा पुष्प भुटटे के साथ जुडे रहते हैं। मक्का की कई उप प्रजातियां पाई जाती हैं।

यह एक मक्का या भुटटा का ही स्वरूप है। बेबीकोर्न शब्द का तात्पर्य शिशु मक्का से है जिसमें पौधे के मध्यम भाग पर गुल्ली या पिंदिया निकल आती है जो रेशम जैसी कोमल कोंपल के साथ वृद्धि कर उग आती है। बेबीकोर्न शिशु मक्का कहलाता है। यह एक अत्यन्त स्वादिष्ट एवं पोषक तत्व युक्त उत्पाद है। जिसकी आजकल भारत एवं विदेशों जैसे थाईलैन्ड और ताइवान निर्यातक देश के रूप में उभरे हैं। कृषकों ने इसको बड़े स्तर पर व्यवसाय के रूप में विकसित किया है। भारतीय मक्का उत्पादक बेबीकोर्न से अभी तक उपयोग एवं आर्थिक महत्व से अपरिचित थे। यही कारण है कि अभी तक बेबीकोर्न का प्रचलन नहीं हो पाया। अब मक्का उत्पादक इसको भी सही एवं उसी तरह से उगा सकते हैं तथा मक्का की अपेक्षा 3—4 गुना अधिक शुद्ध लाभ भी प्राप्त कर सकते हैं। बेबीकोर्न की खेती का विकास धीरे धीरे होता जा रहा है। शहरों के आस पास कृषकों एवं ग्रामीण नवयुवकों व अन्य लोगों के रोजगार के अवसर बढते जा रहे हैं तथा अन्य अवसर उपलब्ध होने से आर्थिक स्थिति को भी बढावा मिलेगा जिससे मक्का उत्पादन क्षेत्रों में बेबीकोर्न को उगाना आसान है तथा ऐसे क्षेत्रों एवं प्रान्तों/राज्यों की मुद्रा अर्जित करने के अवसर भी बढेगे। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि विदेशी मुद्रा को अधिक एकत्र किया जा सकता है। हमारे देश में मक्का के साथ बेबीकोर्न को उगाकर आर्थिक स्थिति में सुधार करना तथा अधिक लाभ प्राप्त करना होगा क्योंकि कृषि जलवायु की परिस्थितियों के अनुसार वर्ष में 3—4 बेबीकोर्न की फसलें ली जा सकती हैं। बेबीकोर्न उत्पादन का शोध कार्य सर्वप्रथम सन 1993 से मक्का अनुसंधान निदेशालय द्वारा हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय के क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र बजौरा कुल्लू घाटी में आरम्भ हुआ। तब से ही बेबीकोर्न के रूप में मक्का की खेती का प्रचलन बढ रहा है। लेकिन अभी भी सम्पूर्ण भारत में बेबीकोर्न के उपयोग एवं उत्पादन के विकास का विस्तार निजी एवं सरकारी दोनों क्षेत्रों को सघन एवं अनगणित प्रयासों को बढावा देना होगा जिससे धीरे धीरे उचित किस्म अधिक उत्पादन तकनीक की उपलब्धता तथा सभी उत्पादन या शस्य क्रियाओं का समावेश करना होगा जिससे उत्पादकों को बाजार आसानी से मिल सके।

बेबीकोर्न की उपयोगिता एवं पोषक तत्वता का एक विशेष महत्व है क्योंकि यह एक स्वादिष्ट पोषक तत्व वाली सब्जी है जिसमे अधिक पोषक तत्व जैसे कार्बोहाइड्रेट,

वैज्ञानिक, कृषि विज्ञान केन्द्र, बहराइच (उ0प्र0)
*असिसटेंट प्रोफेसर, कालेज आफ एप्लाइड एजूकेशन एंड हेल्थ साइन्स, मेरठ
*जिला सलाहकार, कृषि विभाग, कानपुर देहात

कैल्शियम, लौह, वसा, प्रोटीन, विटामिन्स तथा फास्फोरस की मात्रा अन्य सब्जियों जैसे फूलगोभी, पत्तागोभी, सेम, भिन्डी, गाजर, बैंगन, पालक आदि से अधिक पाई जाती है। इसके अर्न्तगत कोलेस्ट्राल रहित रेशों की अधिक मात्रा पाई जाती है जिससे यह निम्न कैलोरी युक्त सब्जी है। इसकी बालियों या गिल्लियों को कच्चा खाया जा सकता है तथा इसी से अनेक भोजन युक्त खाद्य तैयार किये जाते हैं। इससे चीनी खाद्य जैसे विभिन्न सूप, मीट एवं चावल के साथ तलकर चाइनीज फूड में मिक्स करके अचार, सलाद के रूप में सब्जियों के साथ मिक्स करके तथा बेसन कार्न पकोडे आदि के रूप में खाते है। इसके अतिरिक्त कैंडी, पकौड़ा, कोफ्ता, टिक्की, बर्फी, हलुआ और खीर बनाने में बेबीकार्न का उपयोग बहुत हो रहा है तथा डिब्बाबन्दी द्वारा इसे संरक्षित किया जा सकता है। शिशु मक्का, मक्के का एक अनिशेचित भुटटा है जिसे सिल्क निकलते ही तोड़ लिया जाता है। इसका प्रयोग सलाद के अतिरिक्त अनेक प्रकार के अचार एवं व्यंजन बनाने के रूप में किया जा सकता है। यह बहुत ही पौष्टिक खाद्य पदार्थ है जिसको सभी लोग उपयोग में ला सकते हैं।

खानपान की बदलती आदतों और ह्दय रोगियों की बढती संख्या के कारण बाजार में बेबीकार्न की मांग में दिन पर दिन बढी है। बेबीकार्न मक्का के पौधे का वह अनिशेचित भुटटा है जो रेशे आने के 2–3 दिन के अन्दर तोड़कर उपयोग में लाया जाता है। ऐसे में इसकी बढती खपत को पूरा करने के लिए किसान बेबीकार्न की अधिक खेती करके अच्छा मुनाफा कमा सकते हैं। उत्तर प्रदेश कृषि विभाग भी बेबी कार्न की खेती करने के लिए प्रदेश के किसानों की सहायता कर रहा है। मक्का अनुसंधान निदेशालय भारत सरकार भी प्रदेश में बेबीकार्न की खेती करने के लिए किसानो के बीच अभियान चला रहा है। बेबीकार्न मक्का की ऐसी फसल है जिसको वर्ष भर में 3 से 4 फसलें उगाई जा सकती हैं और एक फसल से एक हैक्टेअर में 40 से 50 हजार रूपये तक शुद्ध मुनाफा भी कमाया जा सकता है। पत्ती में लिपटे होने के कारण यह कीटनाशक दवाओं से भी मुक्त होता है।

भूमि एवं जलवायु

यह सभी प्रकार की भूमियों में इसकी खेती की जा सकती है। जहां पर मक्का की खेती होती है वहां पर इसकी खेती की जा सकती है। इसकी खेती के लिए अच्छी जीवांशयुक्त दोमट भूमियां सर्वोत्तम होती है। मिट्टी का पी एच मान 7–8 के मध्य होना चाहिए।

बेबीकार्न के लिए हल्की गर्म एवं आर्द्र जलवायु की आवश्यकता होती है परन्तु संकर किस्मों के कारण वर्ष में इसकी 3 – 4 फसलें आसानी से उगााई जा सकती हैं। बेबी कार्न की फसल उगाने के लिए वर्षाकाल उपयुक्त रहता है।

प्रजातियां

शिशु मक्का के लिए मक्का की अपेक्षा निम्नलिखित अल्प अवधि में पकने वाली एकल क्रास प्रजातियां उत्तम होती है।

1. एच एम 4
2. बी एल 42
3. प्रकाश
4. पूसा अगेती संकर मक्का 3
5. पूसा अगेती संकर मक्का 5
6. विवेक संकर मक्का
7. संकर एम ई एच 133 – 3
8. संकर एम इ एच 1–14
9. अर्ली कम्पोजिट

उपरोक्त किस्मों में से बेबीकार्न का आकार लगभग लम्बाई 17.0 से 18.8 सेमी तथा व्यास 15.3 से 17.4 सेमी छिलका सहित तथा छिलका रहित गिल्ली की लम्बाई 8.2 से 9.3 सेमी तथा व्यास 1.16 से 1.18 सेमी होता है तथा पौधों की ऊंचाई 164 से 200 सेमी होती है जो 48 से 58 दिन में काटी जा सकती है।

बुवाई

बीज की मात्रा

शिशु मक्का के लिए 25–30 कि0ग्रा0 प्रति हैक्टेअर बीज का प्रयोग करना चाहिए।

बीज उपचार

फफूंदीजनित बीमारियों के बचाव के लिए बीजों को ट्राइकोडरमा 4 ग्राम प्रति किलो की दर से उपचारित कर बोना चाहिए अथवा फफूंदीनाशी रसायन जैसे थीरम अथवा केप्टान अथवा कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति किलो बीज दर से उपचारित करने से फसल में लगने वाली फँफूदीजनित बीमारियों से बचाव हो जाता है।

बुवाई का समय

शिशु मक्का की बुवाई किसी भी समय की जा सकती है परन्तु शीत ऋतु (दिसम्बर एवं जनवरी) जब सर्दी अधिक पड़ती है इसकी बुवाई नहीं की जा सकती है।

बुवाई की विधि

शिशु मक्का की बुवाई हल के पीछे कूड़ों में अथवा सीडड्रिल द्वारा पंक्तियों में की जा सकती है। पौधे से पौधे की दूरी 20 सेमी जबकि पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 सेमी उपयुक्त होती है। इस अन्तरण पर प्रति हिल 2 पौधे होना चाहिए। इस प्रकार पौधों का घनत्व 175000 प्रति हैक्टेयर होना चाहिए।

उर्वरक की मात्रा

शिशु मक्का की खेती के लिए अच्छी उर्वराशक्ति वाली मृदा की आवश्यकता होती है। खेत में 5 टन प्रति हैक्टेअर की दर से पूर्णरूप से सड़ी हुई गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट अथवा वर्मीकम्पोस्ट 2 टन प्रति हैक्टेअर की दर से बुवाई के लगभग एक माह पूर्व खेत में अच्छी तरह से मिला देनी चाहिए। मक्का की फसल को 150 किलोग्राम नत्रजन, 70 किलोग्राम फास्फोरस तथा 50 किलोग्राम पोटाश तथा 25 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करनी चाहिए। नत्रजन की एक तिहाई मात्रा, सम्पूर्ण फास्फोरस, पोटाश एवं जिंक बुवाई के समय बीज के नीचे कूंडों में करनी चाहिए। शेष नत्रजन की एक तिहाई मात्रा बुवाई के 25 दिन पश्चात तथा शेष एक – तिहाई मात्रा जीरा निकलते समय खडी फसल में करनी चाहिए।

सिंचाई

सर्वप्रथम सिचाई बुवाई से पहले करें क्योंकि बीजों के अंकुरण के लिए पर्याप्त नमी होनी चाहिए। बेबीकार्न के लिए तीन सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। बुवाई के 20 दिन पश्चात पहली सिंचाई, दूसरी सिंचाई फसल के घुटने की ऊचाई पर आने और तीसरी सिंचाई फसल में फूल आने के पूर्व करनी चाहिए। बेबीकार्न या गिल्ली बनते समय नमी की कमी नहीं होनी चाहिए।

शिशु मक्का की फसल को सिंचाई की अधिक आवश्यकता होती है। शिशु मक्का के लिए जब मृदा में नमी की मात्रा 50 प्रतिशत उपलब्ध नमी होने की दशा होने पर सिंचाई कर देनी चाहिए। ध्यान रहे कि सिंचाई सदैव हल्की देनी चाहिए। जायद एवं रबी के मौसम में उगाई जाने वाली फसल में सिचाई का अधिक महत्व है। जायद की फसल में प्रत्येक 8–10 दिन के अन्तराल पर सिंचाई दी जाती है जबकि रबी के मौसम में 15–20 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए। खेत में अधिक पानी भरने पर जल निकास के माध्यम से अतिरिक्त पानी को तुरन्त निकाल देना चाहिए क्योंकि मक्का की फसल जलभराव को बिल्कुल सहन नहीं कर सकती है।

खरपतवार नियंत्रण

शिशु मक्का की फसल में मौसम के अनुसार चौडी पत्ती एवं घासीय कुल के खरपतवारों का प्रकोप अधिक मात्रा में

होता है। शिशु मक्का की फसल के लिए खेत सदैव खरपतवार मुक्त होना चाहिए। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियन्त्रण के लिए बुवाई के तीन दिन के अन्दर 1.5 किग्रा एट्राजिन 600 लीटर पानी में घोल बनाकर छिडकाव करना चाहिए। इसके अतिरिक्त पेन्डीमिथालिन 1 किग्रा सक्रिय तत्व प्रति हैक्टेअर की दर से प्रयोग करने से चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों का प्रभावी नियन्त्रण हो जाता है। ध्यान रहे कि खरपतवारों के प्रभावी नियन्त्रण के लिए सदैव फ्लेट फैन नोजल तथा छिड़काव एक समान होना चाहिए। वर्षा एवं ग्रीष्मकालीन फसल में खरपतवारों का प्रकोप होने पर 2–3 निराई गुड़ाई खुरपी से करने के साथ साथ हल्की मिटटी पौधों पर चढ़ाये। जिससे पौधे हवा में न गिरने पायें।

नर मंजरी की तोड़ाई

शिशु मक्का की खेती के लिए पौधों में जैसे ही नर मंजरी निकलना प्रारम्भ हों उसे तोड़कर अलग कर देना चाहिए। यह क्रिया करने से शिशु मक्का के भुटटे की गुणवत्ता में सुधार होता है तथा भुटटे भी अधिक संख्या में निकलते हैं।

शिशु मक्का के भुटटों की तुड़ाई

भुटटों में सिल्क निकलने के 24 घन्टे के अन्दर शिशु भुटटे को तोड़ लेना चाहिए। विलम्ब से तुड़ाई करने पर गुणवत्ता में कमी आ जाती है। 15 दिनों के अन्तराल पर 2–3 तोड़ाइयाँ की जा सकती हैं। जब शिशु मक्का की गिल्लियां बेबी कार्न को भुटटे के छिलका से रेशमी कांपल निकलने के 2– 3 दिन के अन्दर ही सावधानी पूर्वक हाथों से तोड़ना चाहिए जिससे पौधे की ऊपरी एवं निचली पत्तियां टूटने न पायें। इस प्रकार वर्तमान किस्मों से 4–5 गिल्लियां प्राप्त कर सकते हैं।

बीमारियां एवं कीट नियन्त्रण

बेबीकार्न मकका की फसल में बीमारियों का प्रकोप बहुत कम मात्रा में होता है परन्तु छोटी अवस्था में पौध गलन रोग का प्रकोप हो जाता है। इसके नियन्त्रण के लिए बेविस्टीन या डाइथेन एम 45 का 1.5 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें। इसकी पत्तियों पर धब्बे रोग का भी प्रकोप होता है यह रोग भी उपरोक्त उपचार से नियंत्रित हो जाता है। इसमें मांहू, केटरपिलर तथा भिनगा कीट का प्रकोप होता है। कीट नियंत्रण के लिए इन्डोसल्फान या रोगार या मोनोक्रोटोफास का 1 प्रतिशत घोल का छिडकाव करें।

उपज

एक अच्छी फसल से 15 –20 कुन्तल प्रति हैक्टेयर शिशु मक्का प्राप्त हो जाती है। शिशु भुटटों के अतिरिक्त 200 –250 कुन्टल प्रति हैक्टेअर हरा चारा प्राप्त हो जाता है।

शिशु भुटटों का भन्डारण एवं विपणन

तुड़ाई के पश्चात शिशु भुटटों की ग्रेडिंग की जाती है। ग्रेंडिंग प्रक्रिया भुटटों के आकार के अनुसार की जाती है। इन भुटटों को पालीथीन बैग में उन्हे बन्द करके विपणन हेतु भेजा जाता है। बर्फ के टुकडों को बीच में रखने पर इन भुटटों को 5 दिनों तक रखा जा सकता है।

बेबीकार्न का बाजार मूल्य 30 रूपये प्रति किलोग्राम तथा चारे का मूल्य 70 रूपये प्रति कुन्तल होता है

आर्थिक लाभ

2000 किलो बेबीकार्न रू 30 रूपये की दर से 60000 रूपये

25000 किलोग्राम हरा चारा रू 70 रूपये की दर से 1750000 रूपये

कुल लाभ रू 2350000 रूपये

लागत रू 50000 रूपये

शुद्ध लाभ रू 185000 रूपये

उपरोक्त बेबीकार्न की फसल कृषकों एवं सब्जी उत्पादकों के लिए एक उद्योग का दर्जा प्राप्त करा सकती है। अतः शिशु मक्का शिक्षित बेरोजगारों कों अवश्य उगानी चाहिये जिससे अधिक लाभ अर्जित किया जा सकता है। यदि थोड़ी सी मेहनत एवं लगन से अधिक लाभ मिलने से सदैव मुनाफे का सौदा हो सकता है। क्योकि आज का समय बेरोजगारों का है लेकिन कृषक व्यवसाइयों में भी स्नातकों एवं उन्नतशील कृषकों के लिए ऐसी सब्जी की फसलें एक चमत्कार मिल सकें।

अमरूद को कीटों रोगों एवं व्याधियों से बचायें

डॉ प्रदीप कुमार

अमरूद भारत का एक महत्वपूर्ण फल है। इसका वैज्ञानिक नाम सिडियम ग्वाजावा है। इसका उत्पत्ति स्थान उष्ण कटिबंधीय अमेरिका को माना जाता है। भारत में इसका प्रवेश 17वीं शताब्दी में हुआ था। अमरूद में औषधीय एवं पोषक तत्वों की भरपूर मात्रा होती है। यह विटामिन 'सी' एवं 'फाइबर' का अच्छा स्रोत है। शरीर में हीमोग्लोबिन की कमी दूर करता है। मधुमेह को नियंत्रित करने में उपयोगी है। इसके अलावा आकर्षक रंग, आकार, स्वाद एवं सालभर सहजता से कम दामों पर उपलब्धता के कारण इसे 'गरीब का फल, गरीब का सेब' अथवा 'उष्ण जलवायु का सेब' के नाम से भी जाना जाता है। अमरूद में कई तरह के कीटों एवं रोगों का आक्रमण होता है, जिसके कारण फसल को बहुत नुकसान हो जाता है। महत्वपूर्ण कीट एवं रोगों का विवरण व उनके प्रबंधन के तरीके निम्नलिखित हैं–

प्रमुख कीट

1. फलमक्खी

यह अमरूद का सबसे हानिकारक कीट है । फल मक्खी की डॉकस डार्सोलिस जाति सबसे अधिक हानिकारक है। इनकी संख्या जुलाई–अगस्त में सबसे अधिक होती है। नवंबर से मार्च तक यह कीट प्रौढ़ावस्था में शीतनिष्क्रिय रहता है। यह मक्खी पीले रंग की होती है, जो फलों के अंदर समूह में अंडे देती है। अंड रोपण के 2–3 दिनों बाद अंडों से सफेद लटें (मैगट्स) निकलती हैं, जो फल के अंदर के गूदे को खाने लगती हैं। इसके परिणामस्वरूप फलों में सड़न पैदा हो जाती है व कमजोर होकर नीचे गिरने लग जाते हैं।

प्रबंधन

- बाग की गर्मियों में गहरी जुताई कर दें।
- प्रभावित फलों को इकट्ठा करके भूमि में गहरा दबा देना चाहिए अथवा जला कर नष्ट कर दें।
- बरसातकालीन फसल में इसका प्रकोप अधिक होता है। इस को नियंत्रित कर दें एवं सर्दियों वाली फसल ही लें।
- एक बोतल में 200 मि.ली. पानी में मिथाइल यूजोनिल 0.1 प्रतिशत + मेलाथियान 0.1 प्रतिशत को घोलकर पौधे पर 5–6 फीट ऊंचाई पर लटका दें। ट्रैप के मिश्रण को प्रति सप्ताह बदल दें। इसको कली से फल बनते समय बगीचों में उचित दूरी पर 10 ट्रैप प्रति हैक्टर के हिसाब से लगा देना चाहिए। इससे फल मक्खियां आकर्षित होकर मर जाती हैं।
- प्रौढ़मक्खियों को मारने के लिये 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. + 5 कि.ग्रा. गुड़ या चीनी को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें। अगर प्रकोप बना रहता है तो छिड़काव 7 से 10 दिनों के अंतर पर दोहरायें।

2. मिलीबग

अमरूद को आम के मिलीबग (ड्रसिका मैंजिफेरी) एवं नीबूवर्गीय फलों के मिलीबग (पलेनोकोक्स सिट्री) अधिक नुकसान पहुंचाते हैं। इस कीट के निम्फ तथा वयस्क दोनों ही कोमल शाखाओं, पत्तियों व पंखुड़ियों से चिपककर रस चूसते हैं। इससे पौधा पीला पड़कर धीरे–धीरे सूखने लग जाता है।

प्रबंधन

- बगीचों की साफ–सफाई का पूर्ण ध्यान रखें एवं पौधों के आसपास की जगह को साफ रखें।
- कीट पौधों के ऊपर न चढ़ पाएं, इसके लिए पौधे के तने के चारों ओर पॉलीथीन की 25–30 सें.मी. (400 गेज मोटी) पट्टी बांध दें। साथ ही पट्टी के नीचे

सहायक प्राध्यापक, पादप रोग विज्ञान, कृषि ज्ञान केन्द्र गाजीपुर,
नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या।

ग्रीस का लेप कर दें।

- 50 से 100 ग्राम क्यनूालफासॅ 1.5 प्रतिशत चूर्ण को प्रति पौधे की दर से थाले में 15–20 सें.मी. गहराई में मिलायें।
- मिलीबग, पौधे पर चढ़ गई हो तो इमिडाक्लोप्रिड (0.08 प्रतिशत) का छिड़काव करें।

3. छालभक्षक कीट

इस कीट का प्रकोप ऐसे बाग–बगीचों में अधिक होता है, जहां सही तरीके से देखभाल नहीं होती है। इस कीट की लटें (इल्लियां) छाल, शाखाओं या तनों में छेद करके अंदर छिपी रहती हैं। ये रात्रि में छिद्रों से बाहर आकर छाल को खाकर नुकसान पहुंचाती हैं।

प्रबंधन

- बाग को हमेशा साफ–सुथरा रखें। कटी–फटी सूखी छाल एवं ग्रसित शाखाओं को काटकर जला दें।
- कीट द्वारा बनाये गए सुराखों को साफ करके उनमें कैरोसिन या पेट्रोल या क्लोरोफार्म 3–5 मि.ली. प्रति सुरंग या छिद्र में पिचकारी या इंजेक्शन की सहायता से डालें व उनको काली मृदा या रूई के फाहों से बन्द कर दें।

प्रमुख रोगः

1. उकठा (मरुझान, सख़ा या विल्ट)

उकठा अमरूद की फसल का एक अति विनाशकारी रोग है। इसके प्रकोप के कारण हर वर्ष लगभग 5–10 प्रतिशत अमरूद के बाग नष्ट होते जा रहे हैं। यह रोग के नये एवं पुराने दोनों तरह के पौधों में आता हैं । इस रोग में पौधे की पत्तियाँ, सबसे उपरी टहनी से सूखना शुरू करती है। तथा धीरे–धीरे पूरे पेड़ की पत्तियाँ, शाखाएँ फल एवं फूल मुरझाने लगते हैं एवं अंततः पूरा पेड़ सूख जाता है। इस रोग का प्रकोप उन क्षेत्रों में, जहाँ बरसात अच्छी एवं लम्बे समय तक होती है, परन्तु जल–निकास का उचित प्रबन्ध नहीं होता है, अधिक होता है।

रोकथाम

- पौधे उन्हीं बागों में लगाएं जहां पानी के निकास की अच्छी व्यवस्था हो।
- अधिक क्षारीय मृदा में अमरूद के बाग का रोपण न करें।
- जहां इस रोग की समस्या हो, वहां पर सरदार (लखनऊ–49) किस्म लगाएं।
- रोग के शरूआती लक्षण आते समय यदि उन शाखाओं को अच्छी तरह से काट करके जड़ों के पास गुड़ाई कर मृदा को बिनोमिल, टोपसिन–एम अथवा कार्बेन्डाजिम (20 ग्राम प्रति पौधा) मार्च, जून एवं नवम्बर में उपचारित करने से कुछ हद तक निदान/ रोकथाम हो सकती है।
- रोगग्रसित पौधों की मृदा को कार्बेन्डाज़िम 1 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर अच्छी तरह भिगो दें। ग्रसित पौधे को जड़ सहित उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए। उस स्थान पर नया पौधा लगाने से पूर्व मृदा का उपचार कार्बेन्डाजिम (50 डब्ल्यू पी) (1 मि.ली. प्रति लीटर ड्रेचिंग) के घोल से करें।
- जैव उर्वरक–एसपरजिलस नाइजर (ए.एन.17) 5 कि.ग्रा. गोबर की खाद में मिश्रित कर पौधा लगाते समय गड्ढों में भर दिया जाए तो पौधों की जड़ों में उकठा रोग के कवकों को प्रकोप कम होता है।

2. श्यामवर्ण, फल गलन या टहनीमार रोग (एन्थ्राक्नोज)

यह रोग कोलीटोट्राईकम सिडीआई नामक कवक द्वारा होता है। यह रोग उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्रो में काफी भयंकर है । इस रोग के लक्षण प्रायः वर्षा काल में पकते हुए फलों पर अधिक दिखाई पड़ते है। फलों में संक्रमण से फल छोटे, कड़े और काले रंग के हो जाते हैं। फल पकने वाली अवस्था में फलों के ऊपर गोलाकार एक या अनेक धब्बे और बाद में बीच में धंसे हुए स्थान तथा नारंगी रंग के फफूंद उत्पन्न हो जाते हैं। डालियों पर

यदि संक्रमण हो जाये तो डालियां या शाखायें पीछे से सूखने लगती हैं।

रोकथाम

- फाईटोलान (50 प्रतिशत) 2—3 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर 10 दिन के अन्तराल पर 4—5 बार छिडकाव करना चाहिए।
- 'एप्पल कलर' इस रोग के प्रति कुछ सहिष्णु पायी गयी है।
- रोगग्रस्त डालियों को काटकर 0.3 प्रतिशत कॉपरऑक्सीक्लोराइड के घोल का छिड़काव करें। फल लगने के बाद 15 दिनों की अवधि पर 2—3 छिड़काव करें।

3. फल सड़न

यह रोग फाइटोफ्थोरा पैरासिटिका नामक कवक द्वारा होता है शुरु में कवक की सफेद तह फल के डंठल पर जमना सुरु होती है जो 3—4 दिनों में पूरे फल को ढक लेती है यह रोग अधपके फलों को ग्रसित करता है। जिससे वे गिर जाते है। आद्र मौसम रोग के कवक को फैलने में बहुत सहायता करता है ।

रोकथाम

- मेंकोजेब्मेटालेक्सिल (0.2 प्रतिशत) या कापर ओक्सीक्लोराइड (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

4. जड़—गांठ सूत्रकृमि

यह रोग सूक्ष्म पादप परजीवी सूत्रकृमि के कारण होता हैं। इस रोग के प्रमुख लक्षण जड़ें गुच्छेदार, पतली व छोटी रहना और जड़ों का फूलकर मोटी हो जाना है। जब जड़ों को खोदकर देखते हैं तो उन पर गांठें बनी दिखाई देती हैं। सूत्रकृमि पौधे की जड़ों पर परजीवी के रूप में रहकर अपना जीवन निर्वाह करते हैं। पौधे में ज्यादा रोग बढ़ने से जड़ें सूखने लगती हैं तथा बाद में पौधे की टहनियां भी धीरे—धीरे सूखने लगती हैं। इस रोग के कारण बड़े—बड़े पौधे भी सूख जाते हैं।

रोकथाम

- हमेशा स्वस्थ पौधे ही खरीदकर खेत में रोपित करें।
- गर्मियों में बगीचे की गहरी जुताई करें। साथ ही रोगी पौधे, जो सूख चुके हैं, उनको जड़ों सहित खोदकर निकाल लें व नष्ट कर दें।
- अमरूद लगाने से पहले कार्बोफ्रयूरॉन 66 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर व फोरेट 20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की मात्रा को दो भागों में बराबर मात्राा में बांटकर खेत में डालें।
- नीम खली भी इसके लिए प्रभावी है। अतः खाद के साथ इसका भी प्रयोग करें।

5. ब्रॉजिंग

अमरूद में यह एक जटिल पोषक तत्वों की कमी से होने वाला विकार है, जोकि फॉस्फोरस, पोटेशियम और जस्ता की संयुक्त कमी के कारण होता है। पौधे पर जैसे ही फलत प्रारंभ होती है तो पोषक तत्व पुरानी पत्तियों से फलों में चले जाते हैं। इसके परिणामस्वरूप पत्तियों पर तांबे के समान पट्टी दिखाई देती है। पुरानी पत्तियों की शिराओं के मध्य का स्थान लाल या बैंगनी हो जाता है। विकार से ग्रसित पौधों की बढ़वार रुक जाती है। फल सख्त हो जाते हैं। इलाहाबाद सफेदा एवं लखनऊ—49 में इसकी समस्या लाल गूदे वाली किस्म से ज्यादा पायी गई है।

रोकथाम

इस विकार की शुरूआती अवस्था में ही 20 कि.ग्रा. गोबर की खाद, 1 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्पफेट, आधा कि. ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश एवं 100 ग्राम जिंक सल्फेट को मिश्रित करके प्रति पौधे की दर से डाल दें। साथ ही पौधे के चारों तरफ से हल्की निराई—गुड़ाई भी कर दें। अप्रैल व जून में जिंक सल्फेट 6 ग्राम तथा बुझा हुआ चूना 4 ग्राम को 1 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से जस्ते की कमी को दूर किया जा सकता है।

विश्वविद्यालय के कार्य क्षेत्र में स्थापित विभिन्न कृषि विज्ञान/ज्ञान केन्द्र एवं अनुसंधान केन्द्र

क्र. सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष/ प्रभारी अधिकारी	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	वाराणसी	डॉ. संजीत कुमार	9837839411	05542–248019
2.	बस्ती	डॉ. एस. एन. सिंह	9450547719	05498–258201
3.	बलिया	डॉ. रवि प्रकाश मौर्य	9453148303	–
4.	फैजाबाद	डॉ. शशिकान्त यादव	9415188020	05278–254522
5.	मऊ	डॉ. ए. पी. राव	7379618485	0547–2536240
6.	चंदौली	डॉ. एस. पी. सिंह	9458362153	0541–2260595
7.	बहराइच	डॉ. एम. पी. सिंह	9415172725	05252–236650
8.	गोरखपुर	डॉ. सतीश कुमार तोमर	9415155818	–
9.	आज़मगढ़	डॉ. के. एम. सिंह	9307015439	–
10.	बाराबंकी	डॉ. शैलेश कुमार सिंह	9455501727	
11.	महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
12.	जौनपुर	डॉ. सुरेश कुमार कनौजिया	9984369526	–
13.	सिद्धार्थनगर	डॉ. एल. सी. वर्मा	7376163318	05541–241047
14.	सोनभद्र	डॉ. पी. के. सिंह	9415450175	–
15.	बलरामपुर	डॉ. वी. पी. सिंह	9839420165	–
16.	अम्बेडकरनगर	डॉ. रामजीत	9918622745	–
17.	संतकबीरनगर	डॉ. अरविन्द सिंह	9415039117	–
18.	अमेठी	डॉ. रतन कुमार आनन्द	9838952621	–
19.	बहराइच (नानपारा)	डॉ. विनायक शाही	8755011086	–
20.	मनकापुर–गोण्डा	डॉ. ओम प्रकाश	9452489954	–
21.	बरासिन–सुल्तानपुर	डॉ. एस. के. वर्मा	9450885913	–
22.	अमहित–जौनपुर	डॉ. नरेन्द्र सिंह रघुवंशी	–	–
23.	गाजीपुर	डॉ. आर. सी. वर्मा	9411320383	–

विश्वविद्यालय के कृषि ज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाषा कार्यालय
1.	अमेठी	डॉ. शशांक शेखर सिंह	–	–
2.	गोण्डा	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
3.	देवरिया	श्रीमती सरिता श्रीवास्तव	9415419712	–
4.	गाजीपुर	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–

विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाषा कार्यालय
1.	मसौधा, फैजाबाद	डॉ. वी. एन. राय	9415716934	05278–254153
2.	तिसुही, मिर्जापुर	डॉ. एस. के. सिंह	9450164714	05442–284263
3.	वसुली, महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
4.	घाघरा घाट, बहराइच	डॉ. तेजेन्द्र कुमार	9415560503	0525–235205
5.	बड़ा बाग, गाजीपुर	डॉ. पी. पी. सिंह	–	–
6.	बहराइच	डॉ. एस. के. वर्मा	9450885913	0548–223690